ईश्वर का प्रथम उपदेश यही क्यों ?

(आचार्य अग्निव्रत के प्रवचनों से संकलित)

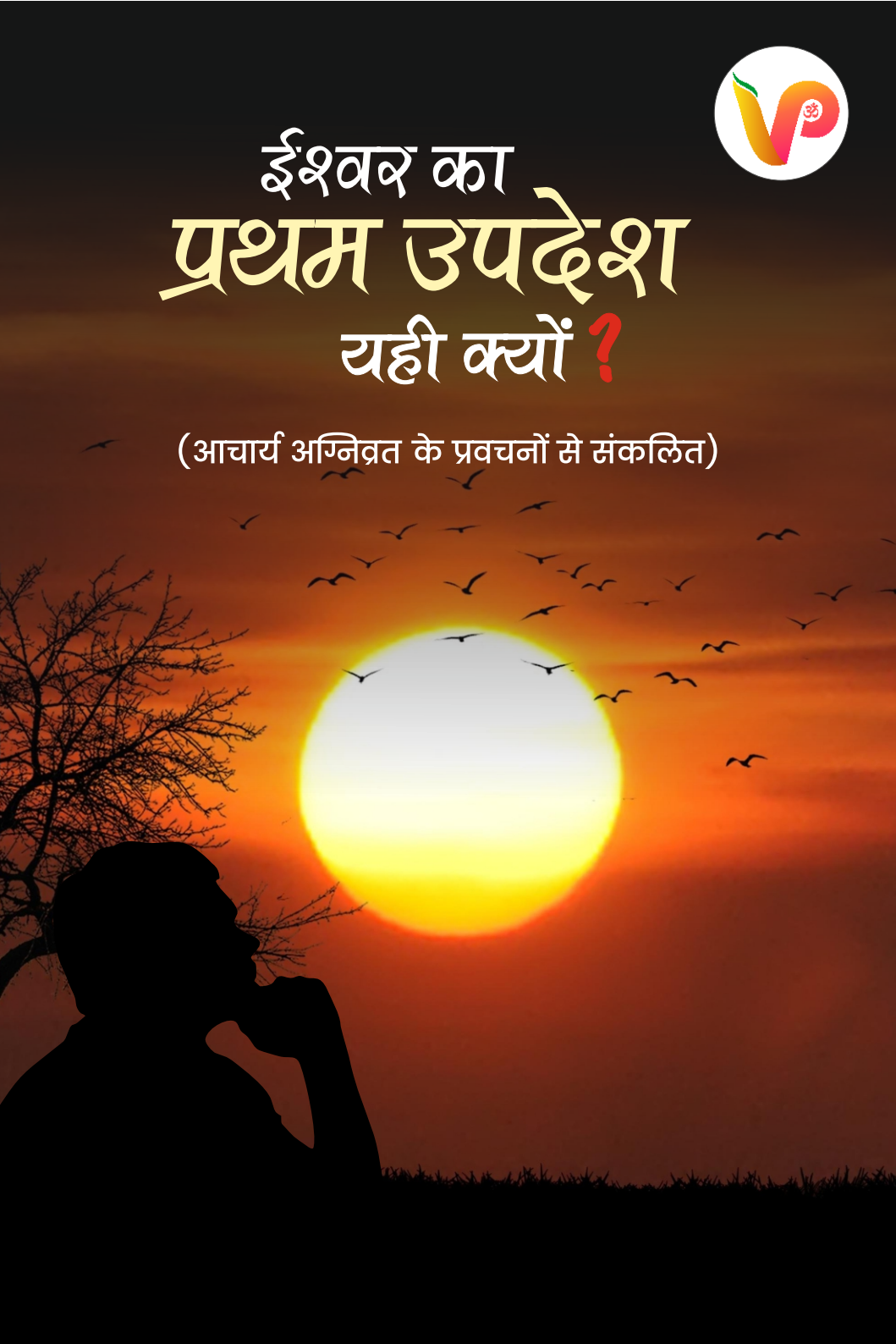

“जो सृष्टि को बिना विचारे आस्था व विश्वास वा परम्परा के नाम पर ईश्वर की पूजा करते हैं, वे मानव जाति को अंधविश्वास के गहन अंधकार में धकेलते हैं और जो बिना विचारे अहंकारवश ईश्वर की सत्ता को नकारते हैं, वे मानव को स्वच्छन्द भोगवादी बनाकर पशु से भी अधम बनाते हैं

इधर हमारा वैदिक विज्ञान दोनों को ही सत्य मार्ग पर लाकर मानव को वास्तव में मानव बनाता है। वैदिक विज्ञान आधुनिक विज्ञान का विरोधी नहीं बल्कि आधुनिक विज्ञान की वास्तविक एवं अनसुलझी समस्याओं का समाधान करने में सहायक है।

–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

ओ३म्

ईश्वर का प्रथम उपदेश यही क्यों ?

(आचार्य अग्निव्रत के प्रवचनों से संकलित)

संकलनकर्त्री
मधुलिका आर्या

सम्पादकद्वय
विशाल आर्य एवं मधुलिका आर्या
(उपाचार्य एवं उपाचार्या)
वैदिक एवं आधुनिक भौतिकी शोध संस्थान

द वेद साइंस पब्लिकेशन
भीनमाल (राज.)

प्रथम संस्करण, 2022

आश्विन शु. १०, विक्रम संवत् २०७९, विजयादशमी
दिनांक : 05.10.2022

सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन सुरक्षित

संख्या : 2000

डिजाइनिंग आदि : विशाल आर्य

मूल्य : **₹250/-**

प्रकाशक : **द वेद साइंस पब्लिकेशन**
वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम, भीनमाल
जिला - जालोर (राजस्थान) - 343029

वेबसाइट : www.thevedscience.com, www.vaidicphysics.org
ईमेल : thevedscience@gmail.com
सम्पर्क सूत्र : 9530363300, 9829148400

सम्पादकीय

संसार के अनेक सम्प्रदाय अपने-अपने ग्रन्थों को ईश्वरीय वाणी बताकर मानवमात्र को उनके अनुसार चलाने का यथासम्भव प्रयत्न करते हैं। वास्तव में मानव का धर्मग्रन्थ वही हो सकता है, जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि का ज्ञान-विज्ञान हो, जिससे मनुष्य सहित सभी प्राणी सुखपूर्वक रह सकें और जिसके अतिरिक्त किसी और ज्ञान की आवश्यकता न रहे। ऐसा ज्ञान वही दे सकता है, जिसने हम सबको बनाया है, इस सृष्टि की रचना की है और जो इसका संचालक व प्रलयकर्ता भी है। क्या वेद के अतिरिक्त कोई अन्य ग्रन्थ इस कसौटी पर खरा उतरता है? नहीं।

वेद क्या है? पूज्य आचार्यश्री द्वारा प्रतिपादित वैदिक रश्मि सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड (सूक्ष्म कणों से लेकर विशाल तारों तक) वेद मन्त्रों की ऋचाओं से निर्मित है और यही मत हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों का रहा है। ये मन्त्र वाणी की पश्यन्ती अवस्था में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विद्यमान हैं। जब मानव सृष्टि का प्रारम्भ होता है, तब चार ऋषि (अग्नि, वायु, आदित्य व अङ्गिरा) इन तरंगों को ब्रह्माण्ड से सीधे अपने मन में ग्रहण करते हैं। इसमें परमपिता परमात्मा की प्रेरणा अनिवार्य रूप से रहती है या ऐसे कहें कि परमात्मा इन चार ऋषियों के द्वारा मनुष्य को ज्ञान प्रदान करता है। इस क्रम में सर्वप्रथम जो ज्ञान तरंगरूप में अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ, वह है-

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥ [ऋग्वेद 1.1.1]

यह मन्त्र सम्पूर्ण वेद अर्थात् सृष्टि विज्ञान, लोकव्यवहार और अध्यात्म विज्ञान की भूमिका है। इसमें ईश्वर ने प्रथम पीढ़ी के मनुष्यों के लिए उपदेश किया है कि सर्वप्रथम उन्हें क्या करना है, कैसा राजा या गुरु

बनाना है और स्वयं को जानना आवश्यक क्यों है ?

एक वेद मन्त्र की कितनी विस्तृत व्याख्या हो सकती है, पाठक इस पुस्तक में देख सकते हैं। यद्यपि यह व्याख्या भी संक्षिप्त ही है, क्योंकि वेदों में अनन्त ज्ञान है। इसीलिए **देवराज इन्द्र** ने कहा है- **अनन्ता वै वेदाः**। इस पुस्तक में आपको एक ही वेदमन्त्र के तीन प्रकार के भाष्य (आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक) पढ़ने को मिलेंगे। वेदभाष्य की जो शैली लुप्तप्राय हो गई थी, उसको आचार्य श्री ने पुनर्जीवित करने का प्रयास किया है।

यह पुस्तक आचार्यश्री के प्रवचनों पर आधारित है, जिन्हें मेरी सहधर्मिणी श्रीमती मधुलिका आर्या ने संकलित किया है तथा भाषा को भी बहुत अधिक परिमार्जित किया है। इस पुस्तक के ईक्ष्यवाचन में भी उनका बहुत बड़ा योगदान है। इस पुस्तक में '**अग्निमीळे पुरोहितं...**' मन्त्र का त्रिविध भाष्य किया गया है। विभिन्न सम्प्रदायों के ग्रन्थों के प्रथम-प्रथम वाक्यों की निष्पक्ष दृष्टि से समीक्षा करने के उपरान्त वेद के बारे में विदेशी विचारकों के मत भी उद्धृत किये हैं। इसके पश्चात् इस मन्त्र की विस्तृत व्याख्या की गयी है। पुस्तक के अन्त में प्रबुद्ध श्रोताओं की अनेक शंकाओं का समाधान किया गया है। पाठकों की भी इसी प्रकार की कुछ शंकाएँ हो सकती हैं, इसलिए यह अध्याय भी अपरिहार्य रूप से पठनीय है।

पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे इस पुस्तक को सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर समाप्तिपर्यन्त पढ़ने का प्रयास करें। तदुपरान्त वे निष्पक्ष हृदय से विचार करें कि क्या उचित है। यदि उनका आत्मा इसमें कही गई बातों को स्वीकार करता है, तो ईश्वर के इस प्रथम उपदेश द्वारा अपने जीवन को अग्निरूप बनाने का प्रयास करें।

-विशाल आर्य

* * * * *

ओ३म्

ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र का भाष्य

[**भाष्यकार** : आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक]

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥ [ऋग्वेद 1.1.1]

भूमिका

चारों वेद एक ही समय में चार ऋषियों के अन्त:करण में समाधि अवस्था में प्रकाशित हुए अर्थात् उन ऋषियों ने समाधि अवस्था में ब्रह्माण्ड से वेदमन्त्र रूपी छन्द रश्मियों को अपने योगस्थ मन के द्वारा चुन-2 कर ग्रहण किया, उन छन्द रश्मियों के पदों का अर्थ एवं उनसे सम्बन्धित सभी पदार्थों का ज्ञान ईश्वर ने साथ-साथ कराया।

चारों वेदों में ऋग्वेद सबसे बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण है। इसमें सृष्टि के विभिन्न पदार्थों के गुण-कर्म-स्वभावों का विवेचन है। चारों वेदों के प्रथम मन्त्रों की रचना को देखकर हमारा ऐसा मत है कि यद्यपि चारों वेद समकालीन हैं, पुनरपि वेदमन्त्रों के ग्रहण करने की प्रक्रिया का प्रारम्भ ऋग्वेद से ही हुआ होगा, भले ही इनकी समाप्ति साथ-साथ हुई हो। यद्यपि मनुस्मृति आदि शास्त्रों

में गायत्री मन्त्र (सावित्री मन्त्र) को व्याहृतिपूर्वक बोलने की महिमा को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। अन्य अनेक शास्त्रों में भी इसी मन्त्र की महिमा वर्णित है। इसके समान महिमा अन्य किसी मन्त्र की कहीं सुनी और पढ़ी नहीं जाती। ऋषि दयानन्द के महान् गुरु दण्डी श्री स्वामी विरजानन्द सरस्वती इसी मन्त्र का घण्टों जाप किया करते थे। ऋषि दयानन्द सरस्वती जी को 'विश्वानि देव सवित...' यह मन्त्र प्रिय था, परन्तु जप के लिए वे भी गायत्री मन्त्र को प्रधानता देते थे।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि फिर ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में ऐसी क्या विशेषता है कि यही मन्त्र सबसे पहले प्रादुर्भूत हुआ? यदि यह मन्त्र विशेष है, तो इसका क्या अर्थ है?

आइए, हम पृथिवी पर मानवोत्पत्ति के समय की परिस्थिति पर कुछ स्थूल विचार करें। मनुष्य की प्रथम पीढ़ी का अभी-अभी युवावस्था में भूमि से प्रादुर्भाव हुआ है। इससे पूर्व सम्पूर्ण पृथ्वी जलचर, नभचर, थलचर सभी प्राणियों, वनस्पतियों, फूलों व फलों के साथ अत्यन्त शुद्ध वायुमण्डल, नदियों एवं सरोवरों में अत्यन्त पवित्र जल आदि से युक्त थी। भूमि-आकाश सब कुछ पूर्ण शुद्ध, सर्वत्र ऑक्सीजन की भरपूर मात्रा, फल एवं मूलों में प्रचुर पौष्टिकता, यह था उस समय का इस पृथ्वी का वातावरण। सब कुछ पूर्ण स्वास्थ्यवर्धक एवं संतुलित अवस्था में था। सभी प्राणी और वनस्पति पूर्णतः नीरोग, विशालकाय व बलवान् थे।

उस समय की प्रथम पीढ़ी यद्यपि नैमित्तिक ज्ञान से विहीन थी, परन्तु उन सबका स्वाभाविक ज्ञान वर्तमान जन्मते बच्चों की अपेक्षा अथवा जन्मते को युवावस्था तक एकान्त में रखें, उस ऐसे युवा की अपेक्षा अधिक एवं पवित्र था। इस कारण उनकी बुद्धि बहुत सूक्ष्म और गम्भीर थी। पुनरपि उन्हें नैमित्तिक ज्ञान की परम आवश्यकता थी, परन्तु पशु-पक्षियों के अतिरिक्त

कोई ऐसा प्राणी नहीं था, जिससे प्रथम पीढ़ी के मनुष्य कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकें और पशु-पक्षियों से उन्हें ज्ञान लेने की कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि वे उनकी अपेक्षा ज्ञान की दृष्टि से भी उन्नत ही उत्पन्न हुए थे। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न स्वाभाविक है कि सर्वप्रथम कौनसी छन्द रश्मि का ग्रहण हुआ और नैमित्तिक ज्ञान के स्रोत परमात्मा ने उस मन्त्र का क्या अर्थ सुझाया? इन सभी प्रश्नों का उत्तर मन्त्र के भाष्य से ही प्राप्त हो सकेगा।

अब आइए, मन्त्र पर विचार करते हैं—

ऋषि, देवता व छन्द

इस मन्त्र का ऋषि मधुच्छन्दा है। [**मधु** = प्राणो वै मधु (श.6.4.3.2), मधु धमतेर्विपरीतस्य (नि.10.31), छन्द धमति अर्चतिकर्मा (निघं.3.14), गतिकर्मा (निघं.2.14), वधकर्मा (निघं.2.19)]

इसका अर्थ यह है कि यह छन्द रश्मि ऐसी प्राण रश्मि विशेष, जो प्रकाशयुक्त होकर गमन करती तथा किसी भी बाधक पदार्थ को नष्ट करती है, प्राण नामक प्राण रश्मि से आच्छादित होती है, से उत्पन्न होती है। इसका देवता अग्नि तथा छन्द गायत्री है। इस कारण इसके दैवत व छान्दस प्रभाव से अग्नि तत्त्व तेजस्वी एवं बलवान् होता है। यहाँ अग्नि तत्त्व से अनेक पदार्थों का बोध होता है, ऐसा जानना चाहिए, जिनके विषय में हम भाष्य में चर्चा करेंगे, क्योंकि मन्त्र में भी अग्नि पद विद्यमान है।

अब हम इस मन्त्र का दो प्रकार का भाष्य दर्शाते हैं, जिनमें सर्वप्रथम आधिदैविक भाष्य करेंगे, क्योंकि यह भाष्य किसी भी मन्त्ररूप छन्द रश्मि के इस सृष्टि में हो रहे उसके प्रभावों तथा सृष्टि के पदार्थों का स्पष्ट बोध कराता है।

आधिदैविक भाष्य

(यज्ञस्य) [यज्ञम् = क्रियाकाण्डजन्यं संसारम् (म.द.य.भा.2.21), संगतः संसारः (म.द.ऋ.भा.1.18.7)] **'यज्ञ'** शब्द **'यज्ञ देवपूजासंगतिकरणदानेषु'** धातु से व्युत्पन्न होता है अर्थात् जिसमें विभिन्न देव पदार्थों की पूजा अर्थात् उनका समुचित उपयोग, उनका पारस्परिक संगतिकरण एवं उनका ग्रहण व विसर्जन आदि कर्म होते हों, उसे यज्ञ कहते हैं। इस सृष्टि में सर्वत्र ऐसा ही हो रहा है। इस कारण यह सम्पूर्ण सृष्टि यज्ञरूप है, जैसा कि ऋषि दयानन्द के इन उद्धरणों से स्पष्ट है, उस ऐसे सृष्टि यज्ञ का मुख्य साधक पदार्थ यह वह प्रथम शब्द है, जो मानव के मस्तिष्क में सर्वप्रथम आया। इस पद के विषय में ऋषियों का कथन है-

(अग्निम्) [**अग्निः** = अग्निः कस्मादग्रणीर्भवति। अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते। अङ्गं नयति सन्नममानः। (नि.7.14), अग्निर्वै देवानां वसिष्ठः (ऐ.1.28), अग्निर्वै देवानां मुखं प्रजनयिता स प्रजापतिः (श.3.9.1.6), अग्निरेव ब्रह्म (श.10.4.1.5), वागेवाग्निः (श.3.2.2.13), मन एवाग्निः (श.10.1.2.3), आत्मैवाग्निः (श.6.7.1.20)] इन वचनों से यह स्पष्ट होता है कि यह वह पदार्थ है, जिसकी सृष्टि रचना में सर्वप्रथम आवश्यकता होती है। सृष्टि निर्माण के पृथक्-2 स्तरों पर 'अग्नि' पद के पृथक्-2 अर्थ होते हैं, क्योंकि पृथक्-2 स्तरों पर प्राथमिक उपादान पृथक्-2 होते हैं। इसलिए जब मूल उपादान कारण प्रकृति ही विद्यमान होती है, उस समय 'अग्नि' का अर्थ वाक् तत्त्व अर्थात् परा 'ओम्' रश्मि मानना चाहिए, क्योंकि यही रश्मि प्रकृति में प्राथमिक स्पन्दन उत्पन्न करती है।

द्वितीय चरण में 'अग्नि' का अर्थ मनस्तत्त्व (महत्) मानना चाहिए, क्योंकि यही सृष्टि का सर्वप्रथम पदार्थ है, जिसके बिना आगामी सृष्टि असम्भव है।

तीसरे चरण में 'अग्नि' पद का अर्थ आत्मा अर्थात् सूत्रात्मा वायु है, जो पदार्थ को संघनित करना प्रारम्भ करता है। 'अग्नि' पद का चौथा अर्थ है- 'प्राण', जिसके प्राणापान आदि दस भेद हैं। 'अग्नि' का पाँचवाँ अर्थ है ब्रह्म तथा यहाँ 'ब्रह्म' का अर्थ है- बल, जैसा कि महर्षि तित्तिर ने कहा है- **बलम् वै ब्रह्मा** (तै.ब्रा.3.8.5.2)। बल वह गुण है, जिसकी सृष्टि रचना के लिए सर्वप्रथम आवश्यकता होती है। परा 'ओम्' रश्मि उत्पन्न होते ही बल गुण उत्पन्न हो जाता है।

ये सभी पदार्थ सभी देव पदार्थों को बसाने एवं उत्पन्न करने में सर्वश्रेष्ठ हैं, इसलिए अग्नि को देवों का वसिष्ठ कहा है। ये पदार्थ ही विभिन्न देव पदार्थों का मुख रूप भी हैं, क्योंकि सभी प्रकार के देव पदार्थ छन्द, कण, विकिरण, आकाश आदि इन्हीं पदार्थों से ऊर्जा प्राप्त करते हैं और ये ही सबको उत्पन्न, संचालित एवं संरक्षित करने वाले होते हैं। इन पदार्थों से स्थूल अग्नि के दो पदार्थ और भी हैं।

प्रथम अर्थात् पाँचवाँ अर्थ है 'विद्युत्', जिसके उत्पन्न होने से सभी कण-विकिरण आदि उत्पन्न होना प्रारम्भ होते हैं। विद्युत् की उत्पत्ति के बिना इनकी उत्पत्ति सम्भव नहीं। यद्यपि हम बल को पाँचवाँ पदार्थ लिख चुके हैं, परन्तु बल द्रव्य न होकर गुण है, इस कारण उसे पृथक् मानकर विद्युत् को पाँचवाँ पदार्थ लिखा है।

द्वितीय अर्थात् छठा अर्थ है- 'ऊष्मा', इसकी उत्पत्ति के बिना भी सृष्टि में कोई भी पदार्थ निर्मित नहीं हो सकता। यहाँ छन्द एवं रश्मियों की चर्चा इस कारण नहीं की है, क्योंकि इनका ग्रहण वाक् तत्त्व से ही हो जाता है।

इस प्रकार इन छः पदार्थों रूपी अग्नि तत्त्व, जिसके विशेषणों की चर्चा इस मन्त्र में क्रमशः निम्नलिखित प्रकार से की गई है-

1. पुरोहितम्- [**पुरोहितः** = यः पुरस्तात् सर्वं जगद् दधाति, छेदन धारणाऽऽकर्षणादिगुणाँश्चापि तम् (अग्निं = परमेश्वरं भौतिकं वा), पुरोहितः पुर एनं दधति (नि.2.12), प्रथमः पुरोहितमिति पुर एव वा एनमेतद् दधते। यदग्निमादधते। (जै.3.63)] अर्थात् जिस पदार्थ को अन्य पदार्थ सम्मुख धारण करके नाना प्रकार के बल प्राप्त करते हैं, उन पदार्थों को पुरोहित कहते हैं। अग्नि नामक उपर्युक्त सभी पदार्थ पुरोहित कैसे कहलाते हैं? इस पर हम क्रमशः विचार करते हैं-

(क) वाक् तत्त्व- सृष्टि का सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ, चाहे वह रश्मि हो अथवा कोई तरंग आदि, वे जब अपने सम्मुख अथवा अपने साथ 'ओम्' रश्मि को धारण करते हैं, तभी वे सृष्टि के सूक्ष्मतम बल को प्राप्त करके अग्रिम यजन प्रक्रिया प्रारम्भ कर पाते हैं। स्थूल पदार्थ, जो स्वयं रश्मि आदि सूक्ष्म पदार्थों से मिलकर बने होते हैं, वे अपनी अवयवभूत सूक्ष्म रश्मियों के द्वारा सूक्ष्मतम 'ओम्' रश्मि को धारण करके ही विभिन्न प्रकार के बल प्राप्त कर पाते हैं, अन्यथा सृष्टि में कोई भी बल उत्पन्न भी नहीं हो सकता। ऋषि दयानन्द ने वेद भाष्य में 'पुरोहित' पद से आठ गुणों का ग्रहण किया है- रूप, दाह, प्रकाश, वेग, छेदन, धारण और आकर्षण आदि। यहाँ 'आदि' शब्द से प्रतिकर्षण गुण का ग्रहण करना चाहिए। इन आठों गुणों में से एक भी गुण तब तक प्रकट नहीं हो सकता, जब तक कि कोई पदार्थ 'ओम्' रश्मि से युक्त नहीं होता। ध्यान रहे कि प्रत्येक पदार्थ के अन्दर 'ओम्' रश्मि व्याप्त होती है, इसके उपरान्त भी जब तक वह पदार्थ अन्य किसी पदार्थ की 'ओम्' रश्मि को अपने साथ धारण करके नहीं मिलेगा, तब तक उनका मिलन सम्भव नहीं होगा अर्थात् तब तक कोई बल उत्पन्न नहीं होगा। इस कारण वाक् रूप अग्नि को यहाँ पुरोहित कहा गया है। अन्य छन्द रश्मियों के विषय में भी इसी प्रकार पुरोहित गुण का सम्बन्ध समझना चाहिए।

(ख) मन- इस सृष्टि में परा 'ओम्' रश्मि के अतिरिक्त सभी रश्मियाँ

मनस्तत्त्व में ही उत्पन्न होती हैं। मनस्तत्त्व में रश्मियाँ उसी प्रकार उत्पन्न वा स्पन्दित होती हैं, जिस प्रकार जल में लहरें उत्पन्न होती हैं। इस कारण वाक् रश्मियों के सभी कार्य मनस्तत्त्व के ही कार्य होते हैं। इसलिए महर्षि जैमिनी को कहना पड़ा- **'वागिति मनः'** (जै.उ. 4.11.1.11) और महर्षि ऐतरेय महीदास ने कहा- **'वाक् च वै मनश्च देवानां मिथुनम्'** (ऐ.5.23)। इस प्रकार वाक् तत्त्व मनस्तत्त्व के बिना उत्पन्न ही नहीं हो सकता, इसलिए मनस्तत्त्व रूप अग्नि को भी पुरोहित रूप कहा गया है।

(ग) आत्मा (**सूत्रात्मा वायु**)- इस सृष्टि में जहाँ कहीं भी दो रश्मियों का संयोग होता है, वहाँ 'ओम्' रश्मि के पश्चात् यदि किसी रश्मि की सबसे प्रमुख एवं प्राथमिक भूमिका होती है, तो वह सूत्रात्मा वायु रश्मि ही है। इसके बिना बल की कल्पना सम्भव ही नहीं है। जब कोई कण, तरंग वा रश्मि किसी अन्य कण, तरंग वा रश्मि से संयोग करते हैं, तो उनके अन्दर विद्यमान सूत्रात्मा वायु सम्मुख उपस्थित पदार्थ के बाहर विद्यमान सूत्रात्मा वायु रश्मियों से ही संयुक्त होती है। 'पुरोहित' शब्द से अग्नि के जिन आठ गुणों को दर्शाया गया है, उनमें से कोई भी गुण सूत्रात्मा वायु के बिना कभी प्रकट नहीं हो सकता। इसलिए सूत्रात्मा वायु रूप अग्नि भी पुरोहित कहलाता है।

(घ) प्राण- दो पदार्थों के संयोग और वियोग की प्रक्रिया में सूत्रात्मा वायु के पश्चात् जिस पदार्थ का स्थान है, वह है- प्राण तत्त्व अर्थात् प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त एवं धनञ्जय की ही भूमिका होती है। पूर्वोक्त आठ गुणों में से प्रत्येक गुण की उत्पत्ति में किसी न किसी प्राण रश्मि का होना अनिवार्य है। ये रश्मियाँ भी विभिन्न पदार्थों की यजन क्रियाओं में सदैव उन पदार्थों के सम्मुख प्रकट होकर उन क्रियाओं को सम्पादित करती हैं।

(ङ) विद्युत्- इस सृष्टि में प्रत्येक यजन क्रिया को सम्पन्न करने में विद्युत्

की अनिवार्य भूमिका होती है। वह विद्युत् धनावेश, ऋणावेश अथवा उदासीन किसी भी रूप में हो सकती है। वैदिक विज्ञान में 'विद्युत्' शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है, जो आधुनिक विज्ञान में नहीं है। गुरुत्वाकर्षण बल भी विद्युत् का ही एक रूप है। इस प्रकार सभी पदार्थ विद्युत् के किसी न किसी रूप को अवश्य धारण किए रहते हैं। पूर्वोक्त आठ गुणों की उत्पत्ति भी विद्युत् के बिना सम्भव नहीं है। इस कारण यह भी पुरोहित रूप है।

(च) ऊष्मा– सभी पदार्थों की सभी प्रकार की क्रियाएँ ऊष्मा की विद्यमानता में ही होती हैं, भले ही वह ऊष्मा की मात्रा कितनी ही कम क्यों न हो। अनन्त शीतल प्रकृति में कोई भी क्रिया अथवा बल का होना सम्भव नहीं है और इनके बिना पूर्वोक्त आठ गुणों का प्रकट होना भी सम्भव नहीं हैं। इस कारण ऊष्मा को भी पुरोहित कहा गया है।

2. देवम्– [**देवम्** = देवो दानाद्वा। दीपनाद्वा। द्योतनाद्वा। द्युस्थानो भवतीति वा। यो देवः सा देवता। (नि.7.15)] अर्थात् जो पदार्थ बल आदि का देने वाला, स्वयं प्रकाशित एवं दूसरों को प्रकाशित करने वाला तथा द्युस्थानी होता है, उसे देव कहते हैं। यहाँ 'द्यु' के अर्थ [**द्यौः** = वागिति द्यौः (जै.उ.4.22.11), द्यौरेवात्मा (श.6.3.3.15), ऐन्द्री द्यौः (तां.15.4.8), आपो वै द्यौः (श.6.4.1.9), प्राणो वै दिवः (श.6.7.4.3)] प्रकरण के अनुसार पृथक्–2 होते हैं। जो अग्निवाची सभी छः पदार्थों के साथ घट सकते हैं। जैसे 'ओम्' रश्मि परमात्मा में विद्यमान है। मनस्तत्त्व 'ओम्' रश्मि एवं परमात्मा में विद्यमान है। प्राण रश्मियाँ भी सूत्रात्मा वायु में विद्यमान हैं, सूत्रात्मा वायु रश्मि वाक् अर्थात् 'ओम्' रश्मि में विद्यमान है, विद्युत् प्राण रश्मियों में विद्यमान है तथा ऊष्मा विद्युत् में विद्यमान है। इस कारण देवरूपी अग्नि को द्युस्थानी कहा है।

3. ऋत्विजम्– [**ऋत्विक्** = ऋत्विक् कस्मात्। ईरणः। ऋग्यष्टा भवतीति

शाकपूणिः। ऋतुयाजी भवतीति वा।] पूर्वोक्त अग्निवाची सभी छः पदार्थ ऋत्विक्, इस कारण कहलाते हैं, क्योंकि ये अग्रिम चरण के पदार्थों को प्रेरित करने वाले होते हैं। इसके साथ ही ये सभी पदार्थ सूक्ष्म से लेकर बड़ी छन्द रश्मियों का यजन करने वाले होते हैं। इस यजन से सभी पदार्थ क्रमशः उत्पन्न होते हैं। ये सभी पदार्थ यथासमय प्रकट होकर यजन प्रक्रियाओं को सम्पादित करते हैं। इस कारण सभी पदार्थ ऋत्विक् कहलाते हैं।

4. होतारम्- [**होता** = होतारं ह्वातारम् (नि.7.15), आत्मा वै यज्ञस्य होता (कौ.9.6), वाग्वै होता (कौ.13.9.17.7), मनो होता (तै.ब्रा.2.1.5.9) प्राणो वै होता (ऐ.6.8), क्षत्रं वै होता (ऐ.6.21)]

पूर्वोक्त अग्निवाची सभी पदार्थ होतारूप भी होते हैं, क्योंकि ये सभी पदार्थ अन्य पदार्थों को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। 'ओम्' रश्मि, मनस्तत्त्व, सूत्रात्मा वायु एवं प्राण रश्मियाँ सभी आकर्षण गुण से युक्त होते हैं। विद्युत् एवं ऊष्मा भी आकर्षण अथवा भेदन अथवा दोनों गुणों से युक्त होने के कारण क्षत्ररूप कहलाते हैं। इसी कारण वे होतारूप भी होते हैं।

5. रत्नधातमम्- [**रत्नम्** = रमयति हर्षयतीति रत्नम् (उ.को.3.14), रत्नम् धननाम (निघं.2.10)] अग्निवाची पूर्वोक्त सभी पदार्थ रत्नधा भी कहलाते हैं, क्योंकि ये सभी पदार्थ स्वयं से सूक्ष्म अन्य पदार्थों को धारण करने में श्रेष्ठ होते हैं। हम यहाँ क्रमशः इस बात को स्पष्ट करते हैं-

(क) 'ओम्' रश्मि- यह रश्मि सभी पदार्थों को उत्पन्न व तृप्त करने वाली तथा मूल उपादान पदार्थ प्रकृति को धारण करने वाली होने से रत्नधातम कही जाती है। इससे अधिक निकटता से प्रकृति को धारण करने वाला अन्य कोई भी पदार्थ इस सृष्टि में नहीं है।

(ख) मनस्तत्त्व- ओम् रश्मियाँ जो सबकी तृप्तिकारिणी हैं, उनको धारण

करने वालों में यह श्रेष्ठतम है।

(ग) सूत्रात्मा वायु- यह रश्मि सबकी तृप्तिकारिणी 'ओम्' रश्मि एवं मनस्तत्त्व को धारण करने वालों में श्रेष्ठतम है।

(घ) प्राण- पूर्वोक्त तीनों पदार्थ, जो आगामी पदार्थों को तृप्त करते हैं, उन्हें धारण करने वालों में प्राण श्रेष्ठतम है।

(ङ) विद्युत्- पूर्वोक्त सभी पदार्थ, जो अपने से स्थूल पदार्थों को तृप्त करने वाले हैं, उन सबको धारण करने वालों में विद्युत् श्रेष्ठतम है।

(च) ऊष्मा- ऊष्मा से युक्त पदार्थ इन पाँचों पदार्थों को धारण करने वालों में श्रेष्ठतम है।

ध्यातव्य है कि यहाँ जिन पदार्थों को तृप्तिकारी कहा है, वे सभी पदार्थ उन पदार्थों को क्रियाशील भी करने वाले होते हैं। इस कारण वे 'रत्न' कहलाते हैं। उन रत्नरूपी पदार्थों को धारण करने वाले पदार्थ रत्नधा कहलाते हैं और अनेक रत्नधा पदार्थों में से जो श्रेष्ठ होता है, वह रत्नधातम कहलाता है।

(ईळे) स्तुवे याचे अधीच्छामि प्रेरयानि वा अर्थात् मैं इस उपर्युक्त अग्नि, जो उपर्युक्त विशेषणों से विभूषित होता है, को प्रकाशित करता हूँ, उनको आकर्षित करने की बार-2 इच्छा करता हूँ। यहाँ करने वाला कर्त्ता इस मन्त्र का ऋषि मधुच्छन्दा है, जिसकी व्याख्या हम प्रारम्भ में ही कर चुके हैं अर्थात् ये मधुच्छन्दा रश्मियाँ अग्नि के छः रूपों में से किसी को प्रकाशित करती हैं, किसी को आकर्षित करती हैं और किसी को प्रेरित भी करती हैं। इन ऋषि रश्मियों से उत्पन्न विभिन्न छन्द रश्मियाँ भी इन सब कार्यों में पूर्ण सहयोग करती हैं।

भावार्थ

सम्पूर्ण सृष्टि विभिन्न सूक्ष्म तत्त्वों के मेल से बनी है, इस कारण यह यज्ञरूप ही है। इस यज्ञ का मुख्य घटक अग्नि तत्त्व विभिन्न स्तरों पर भिन्न-2 तत्त्वों का परिचायक है। ये पदार्थ क्रमशः इस प्रकार माने जा सकते हैं- 'ओम्' रश्मि, मनस्तत्त्व, सूत्रात्मा वायु, प्राण तत्त्व, विद्युत् एवं ऊष्मा। ये सभी तत्त्व प्रत्येक पदार्थ को अपने सम्मुख धारण करके उसमें नाना प्रकार के आवश्यक बलों को उत्पन्न करते हैं। रूप, दाह, प्रकाश, वेग, छेदन आदि गुणों के लिए भी ये ही तत्त्व अपने-अपने स्तरों पर प्रथम उत्तरदायी होते हैं। ये ही पदार्थ स्वयं की अपेक्षा सूक्ष्म पदार्थ में स्थित होकर अपने गुण और कर्मों को प्रकट करते हैं। सृष्टि की विभिन्न क्रियाओं में जब-जब जिस-जिस पदार्थ की आवश्यकता होती है, ये प्रकट होते रहते हैं। ये ही पदार्थ अपने से सूक्ष्म पदार्थों को सदैव अपने अन्दर धारण किए रहते हैं। इस छन्द रश्मि को उत्पन्न करने वाली ऋषिरूप रश्मियाँ ऐसे सभी पदार्थों में से कुछ को आकर्षित करती हैं, तो कुछ को प्रेरित करती रहती हैं। सम्पूर्ण सृष्टि इन छः मुख्य पदार्थों के द्वारा खेला जा रहा ईश्वर का खेल है।

इस मन्त्र में सृष्टि निर्माण के मुख्य घटकों, उनके प्रेरकों आदि का संक्षेप में वर्णन है। मनुष्य की प्रथम पीढ़ी ने जब इस पृथ्वी पर जन्म लिया अथवा ब्रह्माण्ड में कहीं भी जन्म लिया, तब उस समय मनुष्य ने कुतूहलपूर्वक इस सृष्टि को देखा, तब उसे इसके बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं था और उसे कोई बताने वाला अर्थात् उससे बुद्धिमान् दूसरा प्राणी भी नहीं था। उस समय अग्नि ऋषि ने ब्रह्माण्ड से जिन छन्द रश्मियों को समाधि अवस्था में ग्रहण किया, उन रश्मियों में यह प्रथम रश्मि थी, जो सृष्टि का सार बतलाने के लिये अनिवार्य थी और इन शब्दों का ज्ञान अग्नि ऋषि को ईश्वर द्वारा हुआ, ऐसा हम लिख चुके हैं। मनुष्य सृष्टि में कैसे रहे, सृष्टि के पदार्थों का कैसे उपयोग करे और सृष्टि को जानकर के ईश्वर को कैसे जाने व प्राप्त करे, इन सबके

लिये सृष्टि का ज्ञान अनिवार्य है।

अब हम इसका आधिभौतिक अर्थ प्रस्तुत करते हैं-

आधिभौतिक भाष्य

(यज्ञस्य) [**यज्ञम्** = अनेकविधव्यवहारम् (म.द.य.भा.29.36), विद्याप्रज्ञाप्रवर्धकम् (म.द.ऋ.भा.4.34.1)] इस सृष्टि के सम्पूर्ण विज्ञान को जानने व प्रज्ञा को बढ़ाने वाले एवं सभी प्रकार के लौकिक व्यवहारों के जानने वाले **(अग्निम्)** [**अग्निः** = अग्निरेव ब्रह्म (श.10.4.1.5), विश्वोपकारक (म.द.ऋ.भा.1.76.2)] वेद अर्थात् सम्पूर्ण सृष्टि के विज्ञान व ब्रह्म को जानने वाले, सम्पूर्ण प्राणिजगत् का हित चाहने वाले महाविद्वान्, **(पुरोहितम्)** जो अपने सम्मुख आये किसी भी मनुष्य वा प्राणी का सदैव हित सम्पादन करने में प्रवृत्त रहने वाला है। **(देवम्)** [**देवः** = दिव्यगुणसम्पन्नो विद्वान् (म.द.ऋ.भा.1.68.1), यो वै देवानां पथैति ऋतस्य पथैति (श.4.3.4.16)] जो दिव्यगुणसम्पन्न तथा सदैव ईश्वराज्ञा के अनुकूल मार्ग पर चलने वाला विद्वान् है। **(ऋत्विजम्)** जो सदैव सबके साथ संगति एवं सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ का सर्वहित में उपयोग करने की भावना रखने वाला हो। **(होतारम्)** जो देने योग्य पदार्थों व उनके यथार्थ विज्ञान का दाता व लेने योग्य पदार्थों का गृहीता अर्थात् सभी लोकोपकारक व्यवहारों का ज्ञाता व उन पर सदैव आचरणशील हो, **(रत्नधातमम्)** जो तीनों प्रकार के सुखों को प्रदान करने वाले पदार्थों को धारण करने वालों में सर्वश्रेष्ठ हो, उस ऐसे महान् पुरुष की **(ईडे)** खोज करो, उसे खोजने व जानने की इच्छा करो और ऐसा पुरुष प्राप्त होने पर उससे सम्पूर्ण सृष्टि व लोकव्यवहारों को सीखने की याचना करो व सीखो। यहाँ पुरुष-व्यत्यय से मध्यम पुरुष के स्थान पर उत्तम पुरुष का प्रयोग है।

भावार्थ

इस सृष्टि के सम्पूर्ण विज्ञान और उसका उपयोग करने तथा सांसारिक व्यवहारों को विशुद्ध रूप से जानने वाले, सम्पूर्ण प्राणिजगत् का हित चाहने वाले, दिव्यगुणसम्पन्न और सदैव ईश्वर की आज्ञा के अनुसार आचरण करने वाले, सभी प्रकार के सुखप्रदाता त्यागी-तपस्वी गुरु को पुरुषार्थपूर्वक खोजकर लौकिक एवं पारलौकिक ज्ञान लेने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। इससे ही सभी मनुष्य परस्पर एक-दूसरे का सुख बढ़ाते हुए आनन्द से रह सकते हैं। इसी प्रकार सब मनुष्यों को इन्हीं सब सद्गुणों से युक्त तेजस्वी राजा का भी चयन करना चाहिए, जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी पर सुख एवं शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो सके।

ज्ञातव्य

यहाँ इस मन्त्र के द्वारा पृथिवी पर उत्पन्न प्रारम्भिक पीढ़ी के सभी मनुष्यों को संसार में रहने के लिए ऐसे गुरु को खोजने की प्रेरणा दी गई है, जो वेद का साक्षात् कर चुका है अर्थात् अग्नि आदि चार महर्षियों, पुनः अन्य ब्रह्मादि ऋषियों को खोजने का उपदेश है।

सभी मनुष्यों को चार ऋषियों से वा ब्रह्मादि से सम्पूर्ण विद्या व व्यवहार सीखने का उपदेश है और यह उपदेश लेना भी अनिवार्य था। यहाँ शिक्षक पुरुष के साथ-2 राजपुरुष का भी ग्रहण हो सकता है, तब अर्थ में किञ्चित् भेद हो जायेगा। महर्षि दयानन्द जी ने जो भौतिक व आध्यात्मिक अर्थ किए हैं, उन्हें भी यहाँ जोड़कर देखना चाहिए। इस प्रकार मन्त्र के कुल चार अर्थ हैं। दो अर्थ यहाँ हमने दिए व दो ऋषि दयानन्द भाष्य में पढ़ें। यदि ऋषि का भाष्य उपलब्ध नहीं होता, तो हम इस प्रकार के दो अर्थ और भी करते। ऋषि दयानन्द ने अर्थों में भौतिक अग्नि को खोजकर नाना प्रकार के भौतिक अनुसंधानों की प्रेरणा की बात कही है, जो इस पृथिवी पर सुखद

जीवन-यापन के लिए अनिवार्य है। यह ज्ञान भी प्रथम पीढ़ी के लिए अनिवार्य था।

अन्त में ऋषि दयानन्द ने 'अग्नि' पद से परमेश्वर का ग्रहण करके उसका साक्षात् करके जानने की प्रेरणा प्रदान की है। यही मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है, इस कारण यह ज्ञान सबसे अधिक अनिवार्य था, परन्तु सृष्टि को जाने बिना सृष्टि बनाने वाले परमात्मा का विज्ञान कभी नहीं हो सकता, इस कारण इस मन्त्र का आधिदैविक भाष्य अनिवार्य है।

इस प्रकार यह मन्त्र मनुष्य के लौकिक व पारलौकिक सभी धर्म वा कर्त्तव्यों एवं सम्पूर्ण सृष्टि को जानने का साररूप में उपदेश देता है, जो सम्पूर्ण वेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। इस कारण यह मन्त्र चारों वेदों की प्रस्तावना है और इसीलिए यह प्रथम मन्त्र है।

* * * * *

1. आखिर ईश्वरीय ग्रन्थ कौनसा है?

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! आज मैं विश्व के समस्त मानव समाज से कुछ बातचीत करना चाहता हूँ। आज से पौराणिक हिन्दू समाज का नौ दिन का एक पर्व 'नवरात्रा' प्रारम्भ हो रहा है, जिसमें विविध प्रकार के पूजापाठ, कर्मकाण्ड आदि का आयोजन होगा और जिन लोगों की धर्म में आस्था नहीं होती है, वे भी इन नौ दिनों में अपने को कुछ धार्मिक अनुभव करने लगेंगे। ऐसा होते हुए भी बड़ा स्पष्ट है, बड़ा कटु सत्य है कि प्रतीत होते हुए धर्म के प्रवाह में न तो धर्म कहीं दिखाई देता है और न ही वेद। इसी प्रकार हमारे इस्लामी बन्धुओं को रोज़ों के अवसर पर और ईसाई लोगों को अपने पर्व पर ऐसा लगता है कि वे बड़े धार्मिक हो गए हैं। वैसा ही हिन्दू भाईयों को भी आज से प्रतीत होगा।

सभी जानते हैं कि सम्पूर्ण विश्व में सबसे अधिक रक्तपात हुआ है, तो धर्म के नाम पर हुआ है और आज भी हो रहा है। **विश्व के लगभग 56 देशों में इस्लाम तथा 100 देशों में ईसाई मत का विस्तार क्या रक्त बहाकर तथा छल, कपट व भोले लोगों को लोभ देकर नहीं हुआ? तब क्या इन्हें धर्म कह दें?** आज जो भी समस्याएँ दिख रही हैं, संसार में जो भी देश नए-नए एजेंडे लेकर आ रहे हैं, उनके पीछे भी कहीं न कहीं यह उद्देश्य रहता है कि मेरा धर्म इस संसार पर साम्राज्य करे। वे इस बात को बतायेंगे नहीं, लेकिन एजेंडा यही है कि हमारा ही राज्य हो, हमारे ही सम्प्रदाय का राज्य हो। ऐसा लगता है कि यह मनुष्य सब कुछ बन गया, लेकिन मनुष्य नहीं बना। इसलिए आज मनुष्य, मनुष्य के रक्त का प्यासा है। ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि मनुष्य मनुष्यधर्म को भूल गया। पहले कभी एक धर्म, एक

भाषा और एक भावना हुआ करती थी, लेकिन अब समस्त मानव समाज खण्ड-2 हो गया है। उसमें भी सबसे अधिक खण्ड हिन्दू समाज के हुए हैं।

वास्तव में ईश्वरप्रसूत धर्म तो गंगोत्री और उससे भी पहले गोमुख से निकला हुआ विशुद्ध पवित्र जल था, लेकिन जब गंगा नदी सुन्दरवन डेल्टा में जाकर गिरती है, तब उसका जल कैसा होता है, यह सभी जानते हैं। उस पवित्र गंगाजल में ये अशुद्धियाँ कहाँ से आईं? इसका उत्तर है- नदी-नालों और शहरों के कचरे से। वैसे ही धर्म तो एक था- शुद्ध, पवित्र तथा सबके लिए हितकारी था, लेकिन उसमें बहुत सारी बीमारियाँ आ गईं। उसमें बहुत सारे विचारों के नदी-नाले मिले और उनमें से भी बहुत सारे नदी-नाले व नहरें निकलीं। वे सभी अपवित्र थे, उनमें बहुत मिलावटें थी।

वर्तमान में जो लोग दावा करते हैं कि उनका धर्म उस शक्ति ने उत्पन्न किया है जिसने संसार को रचा है, ऐसे चार धर्मों की मैं बात करूँगा। वास्तव में धर्म एक होता है, जो मानव धर्म है। मैं 'धर्म' शब्द का प्रयोग इसलिए कर रहा हूँ, क्योंकि लोग इसको धर्म कहते हैं। वस्तुतः ये सभी सम्प्रदाय हैं। लेकिन जब ये सभी सम्प्रदाय वाले अपने-2 सम्प्रदायों को मानव धर्म कहने लग जाएँ और सम्पूर्ण मानव जाति को उसी के झण्डे के नीचे लाने का भगीरथ प्रयास करने लगें, तब एक विवेकी पुरुष के सम्मुख यह प्रश्न उपस्थित होता है कि इनमें धर्म कौनसा है? इनमें मानव धर्म कौनसा है? इनमें से कौनसी विचारधारा ऐसी है, जिसको लेकर के चला जाए, तो संसार में सुख-शान्ति की स्थापना हो? उनमें से प्रथम सम्प्रदाय है- हिन्दू। अगर 'हिन्दू' शब्द का अर्थ पूछें, तो हिन्दू को ही नहीं पता। कुछ लोग 'हिन्दुत्व' को एक विचारधारा वा जीवन शैली कहते हैं, परन्तु वे उस जीवन शैली की तर्कसंगत व्याख्या नहीं कर पाते। कुछ लोग इसे विदेशियों द्वारा दिया गया नाम बताते हैं कि जो सिन्धु नदी के इस पार रहते थे, उनको हिन्दू कहने लगे।

यह बड़े शोक का विषय है कि उन्हें अपना नाम तक जानने के लिए

विदेशियों की शरण में जाना पड़ता है, इससे अधिक बौद्धिक दासता क्या हो सकती है? अपने शास्त्रों व ऐतिहासिक ग्रन्थों में दिया गया 'आर्य' नाम उन्हें अच्छा नहीं लगता। जो बहुत पढ़े-लिखे लोग हैं, वे भी यही जानते हैं कि हिन्दू एक धर्म विशेष है। वे ऐसा मानते हैं कि वेद हिन्दुओं का धर्मग्रन्थ है, लेकिन यह भी पूर्ण सत्य नहीं है। वेद मात्र हिन्दुओं का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवजाति का है। वेद मनुष्य की तरह प्रत्येक बुद्धिमान् प्राणी का भी है, जो ब्रह्माण्ड में कहीं भी रहता हो। सबके लिए वेद एक ही है, यह हमारा दावा अवश्य है, परन्तु अभी हम ऐसा नहीं कहेंगे, आगे परीक्षा करेंगे। हाँ, इस प्रसंग में इतना बताना भी आवश्यक हो गया है कि आज हिन्दूवाद के अनेक ध्वजवाहक वेद के स्थान पर उपनिषद्, भागवत पुराण, गीता, विशेषकर गीता को ही हिन्दुओं का धर्मग्रन्थ घोषित कर रहे हैं। जब ये कथित हिन्दूवादी ही वेद की उपेक्षा करने लगें, तब इन्हें अन्य सम्प्रदायों का उपहास का पात्र बनने से कैसे बचाया जा सकता है?

वास्तव में ऐसे लोग विदेशी षड्यन्त्रकारी लोगों की दासता के पाश में बन्धे हैं। विदेशी जानते हैं कि वेद को मिटाने से ही सनातन धर्म व भारत के आदर्शों को मिटाया जा सकता है, अन्यथा नहीं। इसी कारण उन लोगों को ही भारत के महापुरुष बताया जाता है, जिन्हें वेदों का कोई ज्ञान नहीं था। जब इनके आदर्शों को वेद का ज्ञान नहीं था, तब उनके भक्तों का वेद से क्या सम्बन्ध रह पायेगा और वेदविहीन भारत भला कैसे कभी महान् बन पायेगा? वास्तव में वेद की उपेक्षा भारत की ही उपेक्षा नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानव व प्राणिमात्र की उपेक्षा है और सभी दु:खों का यही मूल कारण भी है।

दूसरा सम्प्रदाय है- ईसाई, जो न्यू टेस्टामेंट को अपना धर्मग्रन्थ मानते हैं। वे इसे ईश्वरीय ग्रन्थ मानते हैं। वे मानते हैं कि ईसा मसीह ईश्वर के पुत्र थे और उन्होंने नया नियम 'न्यू टेस्टामेंट' लिखा, जिसमें उनकी शिक्षाएँ हैं। उनसे भी पुराने हैं- यहूदी, जो ओल्ड टेस्टामेंट को अपना धर्मग्रन्थ मानते हैं

और इस्लाम, जो कुरान को धर्मग्रन्थ मानते हैं। इन चार ग्रन्थों की मैं चर्चा करूँगा।

आज से लगभग तीस वर्ष पहले मेरे सामने एक पुस्तक आई, जब मैं मथुरा गुरुकुल में पढ़ने गया था। उस पुस्तक नाम था– 'वेद और कुरान'। श्रीमद् आचार्य प्रेमभिक्षु जी ने मुझे यह पुस्तक दी और कहा कि इस पर कुछ लिखो। मैंने उस पुस्तक को देखा, उसका लेखक कहता है कि वेद ईश्वरीय वाणी है, वेद सबसे पहले प्रकट हुआ और कुरान अन्तिम वाणी है, जो खुदा के द्वारा सबसे बाद में प्रकट हुआ। फिर वह लेखक लिखता है कि किसी भी लेखक का अन्तिम ग्रन्थ अधिक प्रामाणिक होता है। आज डॉ. जाकिर नाइक जैसे इस्लामी स्कॉलर भी इसी बात को कहते हैं और वेद के बहुत से प्रमाण देते हुए कहते हैं कि वेद भी ईश्वरीय है और कुरान भी ईश्वरीय है। अन्तर इतना है कि वेद प्रारम्भ में कहे, कुरान अन्त में और किसी लेखक का अन्तिम ग्रन्थ ही अधिक प्रामाणिक होता है। ऐसे विद्वान् इस संसार में एक नए षड्यन्त्र का सूत्रपात कर रहे हैं, विशेषकर हिन्दुओं के विरुद्ध। अनेक हिन्दू वा सनातन धर्मी इनके वाग्जाल में फँस जाते हैं। वे इस बात को भूल जाते हैं कि ऐसा कहकर वे तथा उनसे प्रभावित बन्धु स्वयं उपहास का पात्र बन रहे हैं और ईश्वर को भी उपहास का पात्र बना रहे हैं।

मैं पूछता हूँ डॉ. जाकिर नाइक से या इसके समान विचारधारा का कोई दूसरा विद्वान् हो, जो इस प्रकार की बात कहता हो कि वेद परमात्मा की प्रथम पुस्तक है और कुरान अन्तिम पुस्तक है। इन दोनों में अन्तर क्यों है? अगर वे मानते हैं कि कुरान अन्तिम पुस्तक है, इसलिए अधिक प्रामाणिक है, लेखक संशोधन करता है। हाँ, मैं मानता हूँ कि मनुष्य संशोधन करता है, क्योंकि मनुष्य अल्पज्ञ है, उससे भूल हो जाती है। वह भूल सुधारता है, फिर भूल सुधारने में फिर भूल हो जाती है, फिर सुधारता है और ऐसा करके अन्तिम तक पहुँचने का प्रयास करता है। जैसे मैं भी अपना कोई ग्रन्थ लिख रहा हूँ,

तो प्रेस में भेजने से पहले कई बार संशोधन कर लेता हूँ या करना पड़ता है, क्योंकि कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है। तब क्या जिसको खुदा कहते हैं या जिसको ईश्वर कहें, वह भी हमारी तरह अपूर्ण वा अल्पज्ञ है? जो वेद का ज्ञान दिया, तब भूल गया और फिर जो दूसरे मजहबी ग्रन्थ आये, उनमें संशोधन करता गया और कुरान में उसका फाइनल हुआ। इससे वे यह सिद्ध करना चाहते हैं कि कुरान वा वेद को रचने वाला अनाड़ी था या अल्पज्ञ अर्थात् कम जानने वाला था। इसलिए अपनी भूलों को बार-2 सुधारते हुए उसने कुरान में फाइनल किया। अब यह जानने का प्रयास करें कि कुरान में फाइनल क्या हुआ?

वैदिक लोग मानते हैं कि वेद में सब विद्याएँ हैं। वेद के आधार पर सुखपूर्वक जीवन जीया जा सकता है। वेद के आधार पर राजनीति भी हो सकती है। विज्ञान, चिकित्साशास्त्र, कृषिशास्त्र, अर्थशास्त्र, अध्यात्म आदि सब वेद से सीखा जा सकता है। क्या कुरान में ये सब है? वेद के आधार पर कोई आयुर्वेद का विद्वान् अथर्ववेद से किसी व्यक्ति की चिकित्सा कर सकता है? लेकिन क्या कोई व्यक्ति कुरान या बाइबिल के आधार पर किसी की चिकित्सा कर सकता है? वेद के आधार पर व्यक्ति मकान बना सकता है। जो अन्य धर्मग्रन्थ कहे जा रहे हैं, क्या उनके आधार पर कोई मकान बना सकता है? क्या अन्य धर्मग्रन्थों के आधार पर कोई कृषि कर सकता है? क्या अन्य धर्मग्रन्थों के आधार पर अर्थशास्त्र चला सकता है? क्या अन्य धर्मग्रन्थों के आधार पर देश को चलाया जा सकता है? क्या-2 काम किये जा सकते हैं? विचारे करें। वेद के आधार पर सम्पूर्ण सृष्टि को जाना जा सकता है, क्या बाइबिल व कुरान आदि के आधार पर ऐसा हो सकता है?

वेद के पक्षधर मानते हैं कि मनुष्य वेद के आधार पर सब काम कर सकता है और सब काम करता भी रहा है। इस विषय में इंजील, तौरेत और कुरान के पक्षधर क्या कहेंगे? उनके विद्वान् इस बात पर विचारें कि यदि

संसार से सारी विद्याएँ लुप्त कर दी जाएँ और जिसको वे अपना धर्मग्रन्थ कहते हैं, बस वे ही बचें, तो क्या वे जी भी सकते हैं? क्या सृष्टि के बारे में कुछ जान सकते हैं? क्या लोक व्यवहार सीख सकते हैं? कितना जान सकते हैं? अगर यह सब नहीं जान सकते, तब तो खुदा ने संशोधन करने की बजाय और उल्टा कर दिया। बहुत कुछ था वेद में और सब भूलकर ऐसे ग्रन्थ बना दिये, जिनमें सब विद्याएँ ही नहीं हैं, तब जीवन कैसे चलेगा?

सृष्टि के आदि में परमात्मा ने वेद का ज्ञान दिया होगा, जीवन चलाने के लिए सम्पूर्ण विद्याएँ दी होंगी, क्योंकि सम्पूर्ण सृष्टि परमात्मा ने बनाई। ईश्वर ने मनुष्य व अन्य प्राणियों को बनाया, तब क्या मनुष्य बनाकर के ऐसे ही निराश्रित व मूर्ख छोड़ दिया होगा? उसको ज्ञान तो दिया ही होगा न कि इसमें कैसे रहना है? कैसे जीना, कैसे सृष्टि को जानना, कैसे अपने शरीर को जानना, कैसे स्वयं को जानना, कैसे ईश्वर को जानना? अगर यह सब ज्ञान नहीं देना होता, तो किसी पुस्तक की आवश्यकता ही नहीं होती। फिर कुरान में आकर सब भूल गया? संशोधन कहाँ हुआ? वेद के अतिरिक्त अन्य धर्मग्रन्थों में कौन-2 सी विद्याएँ हैं? इस्लाम व बाइबिल के स्कॉलर इस बात पर विचार करें। बाइबिल को मानने वाले बताएँ कि जो विश्व में विज्ञान व टेक्नोलॉजी की प्रगति कर रहे हैं, क्या उसका स्रोत कहीं बाइबिल है? जब बाइबिल की रचना हुई, तब येरुशलम तथा निकटवर्ती क्षेत्रों में विद्या व धन सम्पदा की स्थिति क्या थी? जब कुरान की रचना हुई, तब अरब में विद्या व समृद्धि की स्थिति क्या थी?

इधर भारत के वैदिक काल को देखें, तो सम्पूर्ण विश्व इसे स्वीकार करता है कि सम्पूर्ण विद्या व धन-सम्पदा का केन्द्र आर्य्यावर्त (भारत) रहा है। तब कैसे मानें कि ईश्वर ने वेद में संशोधन करके अन्य ग्रन्थों का ज्ञान दिया? क्या वे नहीं जानते कि वे भारत से कितनी पुस्तक ले गये और उन पुस्तकों में जो ज्ञान है, उसका भी मूल वेद में है। यह मैं नहीं कह रहा, मैं

बहुत सारे विद्वानों के प्रमाण दे सकता हूँ। मेरे पास एक पुस्तक है- 'वेदों का यथार्थ स्वरूप'। इसके लेखक पण्डित धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने, जो आर्यसमाज के एक अच्छे विद्वान् हुए हैं, ईसाईयों, मुसलमानों, जैनों एवं बौद्धों के अनेक विद्वानों का मत दिया है कि वेद क्या हैं ? क्या बाइबिल व कुरान के विषय में ऐसा मत है कि इनमें ये विद्याएँ हैं, सारा ज्ञान-विज्ञान है ?

ईश्वरीय ज्ञान वही होगा, जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि का ज्ञान-विज्ञान होगा और दूसरी बात यह है कि जो ईश्वरीय ज्ञान होगा, उसमें किसी मनुष्य की कहानी नहीं होगी, क्योंकि ईश्वर मनुष्य की कहानी नहीं लिखता। मैं इस पर बहुत ज्यादा चर्चा नहीं करूँगा, केवल एक बात पर चर्चा करता हूँ। वैसे वेद क्या हैं, इसको आपने मेरे अनेक व्याख्यानों में, वैदिक रश्मि थ्योरी के द्वारा सुन लिया होगा। मैं उसको नहीं दोहराऊँगा, लेकिन जिन चार ऋषियों ने वेद का ज्ञान अन्तरिक्ष से ग्रहण किया, उसमें पहला उपदेश क्या था, यह हम देखेंगे।

लेखक का पहला वाक्य ग्रन्थ की भूमिका होता है, उसमें भूमिका रूप में सब कुछ आ सकता है। सबसे पहले मैं उनका पहला वाक्य लेता हूँ, जो कहते हैं कि हमारी पुस्तक अन्तिम है। उस अन्तिम पुस्तक का पहला वाक्य या पहली आयत देखते हैं। कुरान का प्रारम्भ होता है- 'सूरः बक़रः मदनी' से, इसमें 286 आयतें एवं 40 रुकूअ हैं। 'शुरू खुदा का नाम लेकर, जो बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है', यह कौन कह रहा है ? उनके अनुसार यह खुदा कह रहा है। मैं मुस्लिम युवकों से विचार करने के लिए आग्रह करूँगा कि यदि यह बात स्वयं खुदा कह रहा है, फिर वह ऐसा क्यों कह रहा है कि 'शुरू खुदा का नाम लेकर, जो बड़ा मेहरबान निहायत रहम वाला है' ?

मैं अपनी पुस्तक 'वेदविज्ञान-आलोकः' में लिखता कि 'अग्निव्रत का नाम लेकर, जो बड़ा लेखक है'। क्या मैं अपनी पुस्तक ऐसे प्रारम्भ करता ? इस पर विचार करें। उसमें आगे लिखा है- 'अलिफ लाम मीम' इसका कोई

अर्थ नहीं जानता। मेरे पास जो कुरान शरीफ है वह 'महमूद एण्ड कम्पनी मरोल पाइपलाइन, मुम्बई' से प्रकाशित है और तर्जुमा है- मौलाना फतेह मुहम्मद खाँ साहब जालन्धरी। तसही क्या होता है, मैं नहीं जानता। मौलाना अब्दुल मजीद सर्वर साहेब, इसके फुटनोट में लिखते हैं कि 'अलिफ लाम मीम' इसका अर्थ मुहम्मद साहब ने नहीं बताया, इसलिए इस पर हमें बिना कहे सुने ईमान लाना चाहिए। क्या हमें अर्थ को जानने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए? फिर पहली आयत में लिखते हैं-

''यह किताब, इसमें कुछ शक नहीं, डरने वालों की रहनुमा है। जो इस पर ईमान लाते हैं, आदाब के साथ नमाज पढ़ते हैं और हमने उनको दे रखा है, उसमें से वे खर्च करते हैं और जो किताब तुम पर नाजिल हुई और जो किताबें तुमसे पहले पैगम्बर पर नाजिल हुईं, सब पर ईमान लाते हैं, आखिरियत का यकीन रखते हैं।''

''तुम पर नाजिल हुई और उनसे पहले भी जो आसमानी किताबें आईं, उन सब पर हम इमान लाते हैं।''

अर्थात् इसमें कुरान से पहले जो ग्रन्थ हैं, उन पर श्रद्धा बताई है। यह भी ईमानदारी या सद्भावना है कि जो भी इससे पहले आसमानी पुस्तक आयीं, वे सब ठीक हैं, ऐसा इनका कहना है। यहाँ से कुरान शुरू होती है।

पहला प्रश्न यह है कि इसको खुदा ही शुरू कर रहा है और खुदा का नाम लेकर शुरू कर रहा है। अब मैं इसके पीछे जाऊँगा। न्यू टेस्टामेन्ट, जिसको इंजील कहते हैं, ऐसा पण्डित धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने लिखा है, इसकी पहली आयत है- 'इब्राहिम की सन्तान, दाउद की सन्तान, ईशु मसीह की वंशावली, इब्राहिम से इसाक उत्पन्न हुआ, इसाक से याकूब उत्पन्न हुआ और याकूब से यहूदा और उनके भाई उत्पन्न हुए'। यहाँ से ये न्यू टेस्टामेन्ट प्रारम्भ होता है। क्या इससे लग रहा है कि यह आसमानी पुस्तक या ईश्वरीय है? इसमें वंशावली सुना रहे हैं। सृष्टि को रचने वाला, जिसने अरबों

गैलेक्सियों को बनाया, जिसने अरबों सौरमण्डलों को बनाया, वह इब्राहिम की वंशावली सुनाएगा? यहाँ से शुरू करेगा? वंशावली तो मनुष्य सुनाता है। जो कोई वेद में किसी महापुरुष की कहानी, किसी नदी, पर्वत व देश के नाम होने की बात करते हैं, वे भी इस बात पर विचार करें कि ईश्वर ने ये कहानियाँ क्यों लिखीं? वेद पहले वा ये महापुरुष? वस्तुतः यह वेद के प्रति अज्ञानता की पराकाष्ठा है।

अब तौरेत, जिसको ओल्ड टेस्टामेन्ट कहते हैं, इसमें फिर भी कुछ सृष्टि विषयक लिखा है कि 'आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथिवी की सृष्टि की और पृथिवी बेडोल और सुनसान पड़ी थी और गहरे जल के ऊपर अँधियारा था तथा परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर मँडराता था'। ईश्वर का आत्मा जल के ऊपर मँडराता था, लेकिन ईश्वर तो सातवें आसमान पर रहता है, तो भी जल पर नहीं आएगा और चौथे पर है, तो भी नहीं आएगा। जल कौन से आसमान पर है? हमारे यहूदी भाई इस बात पर विचार करें कि जल कौन से आसमान पर है और ईश्वर एक जगह रहता है या सब जगह रहता है? सबसे पहले शुरुआत क्या हुई? यदि शुरुआत परमेश्वर ने की होती, तो यह कहता कि मेरा आत्मा अथवा मैं जल के ऊपर मँडराता था। इससे तो इसका अर्थ यह निकला कि कोई और उपदेश कर रहा है, ईश्वर नहीं।

इन तीन ग्रन्थों को हम ले चुके, जिनको दुनिया का बहुत बड़ा हिस्सा मानता है और ये लोग अपने को बहुत सभ्य और विद्वान् मानते हैं, बड़े वैज्ञानिक मानते हैं और ये चाहते हैं कि वे दुनिया पर शासन करें, लेकिन उनको यही पता नहीं कि धरती कैसे बनी? जब सृष्टि बनी ही नहीं, फिर धरती कैसे बन गई? ऐसा लिखना चाहिए था कि परमेश्वर ने पृथ्वी और आकाश को उत्पन्न किया और उत्पन्न होने के बाद धरती सूनी और बेडोल थी। पानी किस पर था, यह साफ नहीं लिखा। ईश्वर का आत्मा पानी पर मँडराता था, इसका अर्थ हुआ कि या तो ईश्वर पानी पर तैर रहा था या ईश्वर

पानी पर उड़ रहा था, जैसे जलचर पक्षी पानी पर मँडराते हैं कि मछली खाने को मिले। ईश्वर पानी के ऊपर क्यों मँडरा रहा था? क्या वहाँ ईश्वर का निवास था? इस पर विचार करें। पानी पर मँडराता था, इसका अर्थ यह हुआ कि दूसरी जगह ईश्वर ही नहीं था, क्योंकि वह तो पानी पर मँडराता था और क्या सीधे पानी बन गया? अगर वे पानी को H_2O मानते हैं, जिसको वॉटर कहते हैं, वह तो बहुत बाद में बनता है और न ही इसमें यह बताया गया कि ये सब कैसे बन गए? मूलरूप में क्या था, यह भी कहीं नहीं बताया गया।

अब मैं वेद का एक मन्त्र लेता हूँ। तीनों मजहबी ग्रन्थों, जिनको आसमानी किताब कहा जाता है, उनके प्रारम्भिक वाक्यों को लेने के बाद और इन तीनों के मानने वाले सभी बन्धुओं, भगिनियों व माताओं से यह अपील करने के बाद कि वे अपने-2 मजहबी ग्रन्थों या आसमानी पुस्तकों के प्रारम्भ के वाक्यों पर विचार करें कि क्या ये प्रारम्भ के वाक्य उसके हो सकते हैं, जिसने सम्पूर्ण सृष्टि बनाई। सम्पूर्ण सृष्टि कितनी बड़ी है, आप लोग जानते हैं। अब यह उस पोप का समय नहीं है, जिसने गैलीलियो को दण्ड दिया, जिसने ब्रूनो को जिन्दा जलाया। अब तो शायद पोप भी विज्ञान की भाषा बोलने लग गए होंगे। वैज्ञानिकों को फाँसी देने वाले तो चले गए।

आज आपने बाइबिल के विरुद्ध बहुत आविष्कार किए, तौरेत व इंजील के विरुद्ध बहुत आविष्कार किए और मुस्लिम भाइयों ने कुरान के विरुद्ध बहुत आविष्कार किए। लेकिन फिर भी सबका अपनी आसमानी किताबों पर विश्वास यथावत् है, यह बड़े आश्चर्य की बात है। हमारे हिन्दुओं में भी ऐसा ही है, मन्दिर में कुछ और बोलते हैं और विज्ञान की पुस्तकों में कुछ और पढ़ते हैं। जैसे सूर्य पृथ्वी से तेरह लाख गुणा बड़ा है, यह विज्ञान की पुस्तक में पढ़ा और बच्चों को भी पढ़ाया, लेकिन मन्दिर में बोलते हैं- 'बाल समय रवि भक्ष लियो, तब तीनहुं लोक भयो अँधियारो'। मन्दिर में सूरज छोटा हो जाता है, जिसको हनुमान जी मुँह में ले लेते हैं। वास्तव में इनमें से कम कोई

नहीं है, इस विषय में सब भाई हैं। जब मजहबी उन्माद सवार होता है, तब विज्ञान को भूल जाते हैं और जब विज्ञान में रत रहते हैं, तब भी मजहब उनके दिल में समाया रहता है।

धर्म वह है, जो मस्तिष्क और हृदय दोनों में समाया हुआ हो। मैं यह नहीं कह रहा कि इन मजहबी ग्रन्थों को हृदय से निकाल दो, लेकिन इन्हें मस्तिष्क के साथ भी जोड़ो। जब मस्तिष्क भी साक्षी दे कि बात सत्य, तर्कसंगत, सार्वभौमिक और सार्वकालिक है, तो स्वीकार कर लो और यदि आत्मा कहे कि बात सत्य तो नहीं लग रही, तो कदापि स्वीकार मत करो और उसका त्याग कर दो। मैं अपने मजहब से जुड़ा हूँ, इसलिए स्वीकार करना ही पड़ेगा, बहुत लोगों के मन में ऐसी बात आ जाती है। तब उन्हें चाहिए कि वे मजहबी खूँटे से अलग जाकर देखें। कोई किसी भी मजहब से जुड़ा हो, परन्तु हम मनुष्य हैं, पशु नहीं। पशु को किसी खूँटे से बाँध दो, तो वह उसके चारों ओर ही घूमेगा, अपने आप छूटकर कहीं नहीं जा सकता। लेकिन हम बौद्धिक स्वतन्त्रता रखते हैं, अपनी विचारशक्ति रखते हैं, उससे सोचें। अब जो दावा करते हैं कि वेद ईश्वरीय वाणी है, उस वेद का पहला मन्त्र बताता हूँ–

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

इस मन्त्र पर कल से लगातार विचार किया जाएगा, आज केवल मन्त्र सुना दिया है। मैंने तौरेत, इंजील और कुरान इनके जो पहले–2 वाक्य सुनाए हैं, उनका अर्थ मैंने उन्हीं की पुस्तकों में पढ़ा है। वैसे अगर उनको लगता है कि यह अर्थ ठीक नहीं है, यह तर्जुमा ठीक नहीं है, तो वे सही तर्जुमा करके मुझे भेजें, उनका स्वागत है। वेदों का तर्जुमा अर्थात् वेदों का अनुवाद भी तो गलत हुआ है। इस मन्त्र का भाष्य भी गड़बड़ हुआ है। ऋषि दयानन्द के

भाष्य में कम से कम ऐसा लगता है कि ईश्वरीयता है, शेष किसी का भी भाष्य लें, इस मन्त्र का या चारों वेदों का, लगता ही नहीं कि वेद ईश्वरीय है। इसलिए मैं वेद के इस प्रथम मन्त्र पर, जो ऋग्वेद के पहले मण्डल के पहले सूक्त का पहला मन्त्र है, कल से अपना व्याख्यान प्रस्तुत करूँगा। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

2. क्या कहती दुनिया वेद के बारे में?

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्यारे श्रोतागण! वेद के प्रथम मन्त्र की व्याख्या करने से पूर्व मैं कुछ अन्य विचारकों के मत प्रस्तुत करना चाहूँगा, क्योंकि आजकल हमारे देश के युवाओं और विद्वानों का कुछ ऐसा स्वभाव बन गया है कि कोई विदेशी कुछ कहता है, तो उसी को ज्यादा मानते हैं। जैसे कोई पढ़ा-लिखा व्यक्ति हो, जिसके पास बहुत सारी डिग्रियाँ हैं या कोई प्राचीन व्यक्ति जो दूसरे मजहब का है, उन्हीं को अधिक महत्त्व देते हैं। यह हमारे बौद्धिक पतन व दासता की अत्यन्त दु:खद पराकाष्ठा है।

अब मैं 'वेदों का यथार्थ स्वरूप' नामक पुस्तक से कुछ प्रमाण आपके सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ-

अरब देश के विद्वान् लावी द्वारा वेदों का गुणगान

अरब देश के एक विद्वान् हुए लावी और उनका समय हजरत मुहम्मद साहेब के जन्म से लगभग 2400 वर्ष पूर्व था। उन्होंने अरबी भाषा में वेद के विषय में जो लिखा है, यह कविता है और यह हारूं रशीद के राजदरबार-कवि **अस्माई मलेकुस् शरा** द्वारा संगृहीत 'सीरुल्-उकूल' नामक पुस्तक में पाई जाती है। इसका अनुवाद अरबी, अंग्रेजी और हिन्दी में भी दिया है। हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है-

''ऐ हिन्दुस्तान की धन्य भूमे! तू आदर करने योग्य है, क्योंकि तुझमें ही ईश्वर ने सत्य ज्ञान का प्रकाश किया है। ईश्वरीय ज्ञानस्वरूप ये चारों पुस्तकें (वेद) हमारे मानसिक नेत्रों को किस आकर्षित और शीतल उषा की ज्योति देते हैं। परमेश्वर ने हिन्दुस्तान में अपने पैगम्बरों अर्थात् ऋषियों के

हृदय में चारों (वेदों) का प्रकाश किया और वह पृथ्वी पर रहने वाली सब जातियों को उपदेश देता है कि मैंने वेदों में जिस ज्ञान को प्रकाशित किया है, उसे तुम अपने जीवनों में क्रियान्वित करो-उसके अनुसार आचरण करो। निश्चय से परमेश्वर ने ही वेदों का ज्ञान दिया''।

फिर लावी लिखते हैं कि ''साम और यजुर् वे खजाने (कोष) हैं, जिन्हें परमेश्वर ने दिया है। ऐ मेरे भाईयो! इनका तुम आदर करो, क्योंकि वे हमें मुक्ति का शुभ समाचार देते हैं। इन चार में से शेष दो ऋक् और अतर (अथर्व) हमें विश्वभ्रातृत्व का पाठ पढ़ाते हैं। ये दो ज्योतिः स्तम्भ हैं, जो हमें उस लक्ष्य (विश्वभ्रातृत्व) की ओर अपना मुँह मोड़ने की चेतावनी देते हैं''।

दाराशिकोह का वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानना

दाराशिकोह, जो औरंगजेब का बड़ा भाई था, उसने कुरान की एक आयत का अनुवाद इस प्रकार किया है- ''कुरान शरीफ एक पुस्तक है और वह पुस्तक गुप्त है। उसका ज्ञान उसी को होता है, जिसका हृदय पवित्र हो और वह पुस्तक संसार के पालनकर्ता ईश्वर की ओर से प्रकट हुई है''।

आप ध्यान दें कि असली कुरान गुप्त है, तब इससे यह सिद्ध होता है कि मुहम्मद साहब के पास कोई ग्रन्थ था, जिसे वे समझते तो नहीं थे, परन्तु उसे वे असली कुरान कहकर आदर देते थे। अब मुस्लिम बन्धु विचारें कि फिर यह कुरान क्या असली नहीं है? कुरान में अनेकत्र 'रोशन किताब की कसम' यह वाक्य आता है। वह रोशन किताब वेद के अतिरिक्त और क्या हो सकती है?

अब हम कुछ और विद्वानों को लेते हैं-

प्रो. हीरेन् नामक ईसाई विद्वान् का वेदविषयक लेख

''इसमें सन्देह नहीं कि वेद संस्कृत के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। उपलभ्यमान सबसे अधिक प्राचीन संस्कृत-ग्रन्थों में भी उनकी विद्यमानता का स्पष्ट निर्देश

पाया जाता है। वे मनुष्यमात्र की उन्नति के लिए अपनी अद्‌भुत शान में दिव्य प्रकाश-स्तम्भ का काम देते हैं।''

लेओं देल्बो नामक फ्रांसदेशीय विद्वान् का मत

14 जुलाई 1884 को पेरिस में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक सङ्घ के सम्मुख निबन्ध पढ़ते हुए लेओं देल्बो नामक फ्रांसदेशीय सुप्रसिद्ध विद्वान् ने घोषणा की कि ''ऋग्वेद मनुष्यमात्र की उच्च प्रगति और आदर्श की उच्चतम कल्पना है।''

नोबेल पुरस्कार विजेता मैटरलिंक का अभिप्राय

नोबेल पुरस्कार विजेता सुप्रसिद्ध दार्शनिक मैटरलिंक ने स्टाइनर् नामक विद्वान् के शब्दों में वेदों के महत्त्व को निम्नलिखित शब्दों में प्रकट किया-

''केवल सूक्ष्मदर्शी की अन्तर्दृष्टि ही है, जो वेदों में भरे सूक्ष्म ज्ञान को प्रकट कर सकती है। आश्चर्य यह है कि हमारे प्रागैतिहासिक काल के पूर्वजों ने, जिनके विषय में यह कल्पना की जाती है कि वे घोर अज्ञान की भयंकर अवस्था में थे, कहाँ से वह असाधारण अन्तर्ज्ञान प्राप्त कर लिया, जिसे हम फिर से प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं?''

अमेरिका के सुप्रसिद्ध विचारक थोरियो की सम्मति

''मैंने वेदों के जो उद्धरण पढ़े हैं, वे मुझ पर एक उच्च और पवित्र ज्योतिपुंज के प्रकाश की तरह पड़ते हैं, जो एक उत्कृष्ट मार्ग का वर्णन करता है। वेदों के उपदेश सरल, देश वा जातिविशेष के इतिहास से रहित और सार्वभौम हैं तथा उनमें ईश्वरविषयक युक्तियुक्त विचार दिये गये हैं।''

आयर् के डॉ. जेम्स कज़िन्स की श्रद्धाञ्जलि

डॉ. जेम्स कजिन्स नामक आयर् के सुप्रसिद्ध कवि और दार्शनिक ने 'शान्ति का मार्ग' नामक पुस्तक में वैदिक आदर्श की उच्चता का वर्णन करते

हुए लिखा है–

''अर्थात् प्रेम करना, विचार करना और कार्य करना, ये वैदिक विचारानुसार क्षणिक निराशापूर्ण व्यर्थ क्रियाएं नहीं हैं, किन्तु वे विश्वव्याप्त क्रिया के, जो नित्य परमेश्वर के आनन्द से परिपूर्ण है, अनुकरण मात्र हैं''।

रूस के विद्वान् बौलंगर की वेद में श्रद्धा

''प्रो. मैक्समूलर के अनुवाद में जिस बात से मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ है वह यह है कि उसमें बहुत सी बेहूदी, अश्लील और अस्पष्ट बातें हैं। जहाँ तक मैं वेदों की शिक्षा को समझ सकता हूँ, मुझे वह इतनी अधिक उच्च मालूम होती है कि रूसी जनता को एक गड़बड़ और भद्दे अनुवाद द्वारा उससे परिचय कराने को मैं बड़ा भारी अपराध मानता हूँ, क्योंकि इससे वह उस आत्मिक लाभ से वंचित रह जायेगी, जो वैदिक शिक्षा जनता को देती है।''

मि. ब्राउन अंग्रेजी लेखक की श्रद्धाञ्जलि

''वैदिक धर्म केवल एक ईश्वर का प्रतिपादन करता है। यह एक पूर्णतया वैज्ञानिक धर्म है, जहाँ धर्म और विज्ञान हाथ में हाथ मिलाकर चलते हैं। धार्मिक सिद्धान्त यहाँ विज्ञान और तत्त्वज्ञान वा फिलॉसफी पर आश्रित हैं।''

जर्मन दार्शनिक शोपनहार के वेदमूलक उपनिषद्-विषयक वचन

''सारे संसार में कोई इतना लाभदायक और ऊँचा उठानेवाला ग्रन्थ नहीं है, जितनी उपनिषत्। यह मेरे जीवन में शान्तिदायक ग्रन्थ रहा है और मृत्यु के समय भी यही मुझे शान्ति देने वाला होगा।''

फ्रांसदेशीय श्री जैकोलियट् का महत्त्वपूर्ण वचन

''कितनी आश्चर्यजनक सच्चाई है! हिन्दुओं का ईश्वरीय ज्ञान (वेद) ही, जो लोकों की मन्द और क्रमिक रचना बताता है, सब ईश्वरीय ज्ञानों में एक ऐसा है, जिसकी कल्पनाएँ आधुनिक विज्ञान के साथ पूर्ण रूप से मिलती

हैं।''

अमेरिकन विदुषी महिला मिसेज़ व्हीलर विल्लॉक्स ने लिखा है-

''हमने प्राचीन भारत के धर्म के विषय में सुना और पढ़ा है। यह उन महान् वेदों की भूमि है, जो अत्यन्त अद्भुत ग्रन्थ हैं, जिनमें न केवल पूर्ण जीवन के लिए उपयोगी धार्मिक तत्त्व बताये गये हैं, बल्कि उन तथ्यों का भी प्रतिपादन किया गया है, जिन्हें समस्त विज्ञान ने सत्य प्रमाणित किया है।''

(वेदों का यथार्थ स्वरूप, धर्मदेव विद्यामार्तण्ड)

इनके अतिरिक्त और भी बहुत सारे प्रमाण हैं। यहाँ मेरा उद्देश्य तो केवल इतना ही था कि आप यह सोच लें कि जो वैदिक मतावलम्बी नहीं हैं, वे विद्वान् लोग भी वेद के विषय में क्या सोचते आए हैं? लेकिन मेरे लिए इन प्रमाणों का कोई बहुत अधिक महत्त्व नहीं है। ये मैं उनके लिए बता रहा हूँ, जो विदेशियों के प्रमाणों को ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं और वे ऐसा करके स्वयं को आधुनिक तथा प्रगतिशील समझते हैं।

अब ऋग्वेद के पहले मन्त्र पर चर्चा करने से पूर्व इस बात पर विचार करते हैं कि जब मनुष्य धरती पर आया, तो उस समय यहाँ की अवस्था क्या थी। समूची पृथ्वी का कुछ भाग ही भू-भाग था, शेष जलमय था। उस समय वायु, जल, मिट्टी आदि बहुत पवित्र थे। फल, शाक, अन्न आदि सभी प्राकृतिक रूप से उत्पन्न हुए थे। मनुष्य भूमि के गर्भ से निकला और निकलकर के उसने सम्पूर्ण सृष्टि को देखा। वैदिक विचारधारा यह मानती है कि पहली पीढ़ी में हमारी अपेक्षा स्वाभाविक ज्ञान बहुत अधिक होता है। वे सब इस योग्य होते हैं कि वे अपना लालन-पालन कर सकें और वंश चला सकें और ऐसा कब हो सकता है? ऐसा तभी हो सकता है, जब मनुष्य युवावस्था में उत्पन्न हों, लेकिन फिर भी ऐसे मनुष्य भी बिना किसी के सिखाए अपने जीवन को बहुत आगे नहीं बढ़ा सकते, बहुत विकसित नहीं हो सकते। मनुष्य

दूसरों से सीखता है, तो किन दूसरों से सीखेगा? उस समय पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि दूसरे थे। अगर इनसे सीखता, तो इनकी तरह ही घुटनों के बल चलता या हाथ और पैरों से चलता। जैसे पशु शिकार करके खाता है, घास खाता है, वैसे ही खाता, लेकिन मनुष्य ऐसा नहीं है।

आज भी यदि किसी मनुष्य के बच्चे को जंगल में छोड़ दिया जाये, तो उसके अन्दर माता-पिता के जीन्स होने के उपरान्त भी वह पशुओं जैसा ही जीवन जीयेगा। इसलिए प्रारम्भ में मनुष्य को किसी और ज्ञान की अपेक्षा थी। उस समय चार ऋषियों अर्थात् उस पहली पीढ़ी के मनुष्यों ने, जो पूर्व सृष्टि में अपने संस्कार और ज्ञान के कारण श्रेष्ठ थे, योग-साधना के बल पर समाधि को प्राप्त करके, आकाश या मनस्तत्त्व से कुछ ध्वनियों को, जो पश्यन्ती व मध्यमा अवस्था में थी, विशेषकर पश्यन्ती और परा अवस्था की ध्वनियों को उन्होंने ग्रहण किया और वही ध्वनियाँ वेद मन्त्र कहलाईं। जितनी ध्वनियाँ उन चार ऋषियों ने ग्रहण की, उनके अतिरिक्त भी कुछ ध्वनियाँ वा मन्त्र ब्रह्माण्ड में विद्यमान थे, लेकिन उन्होंने जितना उनका सामर्थ्य था, उतना ग्रहण किया और यह निश्चित ही है कि वे चारों पुरुष इतने सामर्थ्यवान् थे कि उनसे बड़ा सामर्थ्यवान् अभी तक धरती पर नहीं हुआ। संसार के मनुष्यों के लिए जितना ज्ञान आवश्यक व पर्याप्त होता है, उन्होंने उतने ज्ञान की तरंगों को ग्रहण किया। ज्ञान की उन तरंगों वा ध्वनियों के द्वारा उन्होंने जो ज्ञान प्राप्त किया गया, वह ज्ञान परमेश्वर ने उन्हें जनाया कि किस ध्वनि का क्या अर्थ है।

पहली ध्वनि के रूप में पहला छन्द क्या निकला? वह छन्द है-

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

यहाँ 'अग्नि' के कुछ विशेषण बताए गये हैं- पुरोहित, देव, ऋत्विक्, होता, रत्नधातम। ये अग्नि के विशेषण हैं और उस अग्नि के गुणों का यहाँ

प्रकाश किया गया है। वेदों का सबसे पहला शब्द 'अग्नि', ऐतरेय ब्राह्मण में भी पहला शब्द 'अग्नि' और चारों ऋषियों में पहला ऋषि–'अग्नि' है। यह 'अग्नि' शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और सम्भवत: चारों वेदों में अग्नि पद ही सबसे अधिक बार आवृत हुआ है अर्थात् सबसे अधिक बार आया है। इस अग्नि में ऐसा क्या है? क्या यह अग्नि और अग्नि के विशेषण अन्य शब्द, सम्पूर्ण सृष्टि के ज्ञान की भूमिका हैं? क्या यह अग्नि और उसके वाचक विशेषणवाची शब्द सम्पूर्ण सृष्टि में रहने के लिए लोकव्यवहार की भूमिका हैं? क्या अग्नि और उसके विशेषणवाची शब्द सम्पूर्ण सृष्टि के अध्यात्म विज्ञान की भूमिका हैं?

ज्ञान तीन प्रकार का होता है–

1. आधिदैविक ज्ञान– सृष्टि सम्बन्धी ज्ञान।
2. आधिभौतिक ज्ञान– लोकव्यवहार का ज्ञान अर्थात् संसार में कैसे रहा जाए, इससे सम्बन्धित ज्ञान।
3. आध्यात्मिक ज्ञान– चेतन विज्ञान।

इन तीन के अलावा चौथा कोई ज्ञान सम्पूर्ण संसार में नहीं है। चौथा ज्ञान जो भी होगा, इन तीन में ही समाहित हो जाएगा। क्या यह मन्त्र हमें इस सृष्टि में रहने, सृष्टि को जानने, स्रष्टा और अपना स्वयं का अर्थात् आत्मा के ज्ञान की भूमिका का निर्देश करता है? यदि ऐसा है, तो वेद ही ईश्वरीय है और यदि ऐसा नहीं है, तो वेद भी ईश्वरीय नहीं है और इसका भी अर्थ वैसा ही है, जैसा कुरान वा बाइबिल की आयतों का है।

कल से हम इसके अर्थ पर चर्चा करेंगे कि यह मन्त्र क्या कहता है? संसार के सभी यहूदी, इस्लामी व ईसाई बन्धुओं से मैं आग्रह करता हूँ कि वे भी अपनी–2 पहली आयतें मुझे बताएँ कि उनका क्या अर्थ है। यदि वे मुझे बतायेंगे कि उसमें सृष्टि विज्ञान, लोकव्यवहार व अध्यात्म विज्ञान की क्या

भूमिका है, तो मैं इस पर संवाद करने के लिए तैयार हूँ और यदि नहीं बता सकते, तो इस भूमिका को सुनिए। यदि आपका आत्मा कहे कि हाँ, ये भूमिका ठीक है, तो हमारे साथ आयें। यह तो आप भी मानते हैं कि वेद सबसे पुराना है। इसका अर्थ यह है कि हमारे पूर्वज भटक गए। हमें तो ऋषि दयानन्द सही मार्ग पर वापिस लाए और इसके लिए बलिदान भी हो गए। वे केवल हिन्दुओं व आर्यसमाजियों के थोड़े ही थे, वे तो मानवमात्र के थे। यह बड़ा दुर्भाग्य है कि संसार उन्हें अब तक नहीं समझा सका। क्या करें जब भारत के कर्णधार ही उन्हें भूल जायें, विद्वत् समाज भूल जायें, तो अनेक कथित राष्ट्रभक्त उनकी निन्दा करें, तब अन्य देशों का दोष ही क्या है?

आइये! हम वापिस उसी मार्ग पर चलें, उसी घर लौटें, जहाँ से हम भटक चुके हैं। पहले हमारे विचार सुनें, मनन करें। आगे मन्त्र पर विचार कल से करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

3. क्या हम आधुनिक विज्ञान के पीछे भाग रहे हैं?

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! हमारे अब तक के प्रवचनों पर दो प्रश्न पूछे गये हैं, पहले उनका समाधान करना आवश्यक है, तदनन्तर ही हम आगे बढ़ेंगे।

पहला प्रश्न- कुरान में खुदा की प्रशंसा है। खुदा का नाम लेके कुरान को प्रारम्भ करते हैं, इसलिए यह खुदाई पुस्तक नहीं है, इस प्रकार तो वेद मन्त्रों में भी परमात्मा की प्रार्थनाएँ हैं, तो वे भी ईश्वरीय ग्रन्थ कैसे हैं?

दूसरा प्रश्न- हिन्दू लोग उस आविष्कार वा खोज को वेद में ढूँढते हैं, जिसको विज्ञान कर चुका होता है। ऐसी खोज कोई नहीं बताते, जो आधुनिक विज्ञान ने नहीं की हो और वह वेद में हो।

दोनों ही बहुत अच्छे प्रश्न हैं, ऐसा लगता है कि श्रोता ने अच्छी तरह से सुना है और पूरे विवेक के साथ ये प्रश्न किये हैं।

प्रथम समाधान- ईश्वर कहे कि इस ग्रन्थ को मैं ईश्वर के नाम से प्रारम्भ करता हूँ, एक विषय तो यह है और दूसरा विषय यह है कि ईश्वर कैसा है, उस ईश्वर की उपासना करो। इन दोनों विषयों में मौलिक अन्तर है। ग्रन्थ प्रारम्भ करने वाला सदैव अपने आदर्श का नाम लेकर वा स्मरण करके ग्रन्थ को प्रारम्भ करता है अथवा अपने इष्ट को याद करके ग्रन्थ को प्रारम्भ करता है, अपना नाम लेकर कदापि नहीं। प्रायः इसका यह उत्तर दिया जाता है कि वेदों में ईश्वर की ऐसी भावना है कि जैसे कोई माता-पिता अपने बच्चों को शिष्टाचार सिखायें कि माता-पिता को नमस्ते करनी चाहिए, किन्तु मैं इस उत्तर से भी बहुत सन्तुष्ट नहीं हूँ। यद्यपि यह ठीक है कि वेद मन्त्रों में ईश्वर की

प्रार्थना इसलिए बताई गई है, ताकि लोग ईश्वर की उपासना व प्रार्थना करें और इनसे उनका जीवन बदले। अगर हम ईश्वर की प्रार्थना, ध्यान, उपासना और भक्ति करेंगे, तो ईश्वर को उससे कोई लाभ नहीं है, इसमें हमारा ही लाभ है। हम ईश्वर को सदैव अपने सामने अनुभव करते हुए अच्छे काम करेंगे, बुराई से बचेंगे, साहसी बनेंगे, हमें सुख एवं शान्ति मिलेगी।

महर्षि दयानन्द ने ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना का फल बताया है। स्तुति का फल बताया कि ईश्वर के गुणों का कीर्तन और उससे अपने गुणों में सुधार। प्रार्थना का फल बताया कि अभिमान दूर होना अर्थात् निरभिमानता आ जाना और उपासना का फल जैसे शीत से आतुर व्यक्ति जब अग्नि के पास जाएगा, तो स्वयं उसको गर्मी लगने लग जाएगी, वैसे ही ईश्वर को निकट अनुभव करने से ईश्वर के गुण हममें भी आयेंगे। हममें साहस आयेगा, हमें शान्ति और आनन्द की अनुभूति होगी। इसलिए स्तुति-प्रार्थना-उपासना की जाती है और इसलिए वेद में ऐसा कहा गया है। मैं इस उत्तर से पूरी तरह सन्तुष्ट नहीं हूँ, यद्यपि यह उत्तर अच्छा है, लेकिन इसके और भी अन्य महत्त्वपूर्ण उत्तर हैं, जिन्हें मैं आगे बताऊँगा।

द्वितीय समाधान- दूसरा जो कहते है कि हम लोग उन्हीं खोजों को वेद में ढूँढते हैं, जिनको विज्ञान कर चुका होता है। ऐसी कोई खोज नहीं बताई, जो विज्ञान ने नहीं की हो। ऐसा कहने वाले ने न तो हमारा 'वेदविज्ञान-आलोकः' ग्रन्थ पढ़ा और न हमारी 'वैदिक रश्मि थ्योरी' को सुना, न ही 'वेदविज्ञान-आलोकः' की कक्षाओं को सुना है और न उसने मेरे प्रिय शिष्य विशाल आर्य (अग्नियश वेदार्थी) द्वारा लिखित 'परिचय वैदिक भौतिकी' नामक पुस्तक ही पढ़ी। हमने अपनी कक्षाओं में वे विषय बताए हैं, जो वर्तमान विज्ञान आगे 100 वर्ष बाद भी सोच पाएगा या नहीं, यह भी हम नहीं कह सकते। चलिये, वैदिक रश्मि थ्योरी तो बहुत विस्तृत है, कोई उसे कितना सुनेगा और कितना समझ पाएगा। लेकिन वेद के प्रथम मन्त्र का जो हम भाष्य बतायेंगे, उसमें भी

वह विज्ञान होगा, जिसे आधुनिक विज्ञान आगामी 50–100 वर्षों में भी नहीं सोच पाएगा, ऐसा मेरा अनुमान है। जब आप सब इस मन्त्र के अर्थ को सुनेंगे, तो प्रश्नकर्त्ता युवक को भी यह बात अपने आप स्पष्ट हो जाएगी। हम आधुनिक विज्ञान की बातों को वेद में नहीं ढूँढते हैं, बल्कि आधुनिक विज्ञान की गलत बातों का खण्डन करते हैं और उनको कहते हैं कि आप यहाँ गलत हैं। सही करना है, तो हमारी 'वैदिक रश्मि थ्योरी' पढ़िए।

अब हम मन्त्र पर आते हैं। पहली पीढ़ी ने जन्म लिया और उस पहली पीढ़ी में ये चार ऋषि भी हुए जिनके नाम थे– अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा। ये उन मनुष्यों के नाम हैं, जो पहली पीढ़ी में जन्मे सभी मनुष्यों में सबसे पवित्र और सबसे उच्च स्तर के थे। उन चारों ऋषियों ने समाधि अवस्था में मनस्तत्त्व से उन ध्वनि तरंगों को पश्यन्ती और परा अवस्था में ग्रहण किया। एक तो मन हमारे मस्तिष्क में होता है अर्थात् हमारे शरीर में होता है और एक मन समूची सृष्टि में व्याप्त होता है और उस मन से ही सृष्टि बनी है। इसे समष्टि मन भी कहते हैं, जो समूचे ब्रह्माण्ड में व उससे बाहर व्याप्त है।

पहला मन्त्र जो अग्नि ऋषि ने ग्रहण किया, वह यह था– 'अग्निमीडे पुरोहितम्...'। जरा विचारें कि मैं किसी को कोई वस्तु दूँ, मान लो कि अपना ग्रन्थ 'वेदविज्ञान–आलोकः' भेंट करूँ, तो भेंट करते समय मैं क्या कहूँगा? उस पुस्तक का साररूप में परिचय बताऊँगा कि यह पुस्तक ऐसे लिखी, इसके ये–ये विषय हैं और इसे इस प्रकार पढ़ना और उसका परिणाम यह मिलेगा, यह सब बताऊँगा। वैसे ही इस मन्त्र से सम्पूर्ण सृष्टि का एक सामान्य परिचय हो जायेगा और यह भी परिचय हो जायेगा कि यह सृष्टि किसने बनाई? इसके साथ यह भी परिचय हो जाए कि ईश्वर ने सृष्टि बनाकर के हम मनुष्यों को दी, तो हम इस सृष्टि में कैसे रहें? तीन बातें मुख्य हैं— पहली बात, सृष्टि क्या है? दूसरी यह कैसे बनती है? तीसरी यह कि हम इस सृष्टि

में कैसे रहें ? तौरेत वाले यहूदी भाई विचार कर लें कि उनका तौरेत भी सृष्टि से शुरू होता है। पृथ्वी और आकाश को बनाया, जल पर आत्मा दौड़ता था। इस प्रकार उन्होंने सृष्टि से शुरू किया, लेकिन उन्हें सृष्टि का ज्ञान नहीं था। सृष्टि में हम कैसे रहें, यह भी उन्होंने नहीं बताया। उसकी हम कल बात कर चुके हैं।

अब हम मन्त्र पर विचार करते हैं। यह जो प्रथम मन्त्र है, इसका ऋषि मधुच्छन्दा है। महर्षि दयानन्द के अनुसार ऋषि कौन है ? पहली पीढ़ी में हुए इन चार ऋषियों के बाद (इन चारों ने तो सबका साक्षात् किया ही था) जिन भी ऋषियों ने जिन मन्त्रों का सर्वप्रथम साक्षात् करके और उनका सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके प्रचार-प्रसार किया, वे उन मन्त्रों के ऋषि हैं और उपकार के लिए उनके नाम मन्त्रों के साथ लिखे गए हैं। मधुच्छन्दा नाम के एक व्यक्ति वा ऋषि हुए हैं, उन्होंने अग्नि ऋषि के पश्चात् अथवा ब्रह्मा जी के पश्चात् इस मन्त्र को तथा इसके विज्ञान को पूरी तरह जाना और प्रचारित व प्रसारित किया, इसलिए इसका ऋषि मधुच्छन्दा है। एक ऋषि और भी होते हैं, वे ऋषि समूची सृष्टि में रश्मियों के रूप में विद्यमान रहते हैं। वे रश्मियाँ क्या हैं ? यह समझने के लिए हमारी 'वैदिक रश्मि थ्योरी' को समझें, जिसके लिये 'वेदविज्ञान-आलोकः' अथवा 'परिचय वैदिक भौतिकी' नामक ग्रन्थों को पढ़ें अथवा हमारी वीडियो को सुनें। उन ऋषि रश्मियों से इस मन्त्ररूपी कम्पन की उत्पत्ति होती है।

मधु क्या है ? **महर्षि याज्ञवल्क्य** शतपथ ब्राह्मण में लिखते हैं- **'प्राणो वै मधु'** अर्थात् प्राण ही मधु है। प्राण, अपान, उदान आदि जो ग्यारह प्राण हैं, उनमें से जो प्राण नामक प्राथमिक प्राण है, वह मधु है। निरुक्तकार **महर्षि यास्क** कहते हैं— **'मधु धमतेर्विपरीतस्य'**, **'धमति अर्चतिकर्मा गतिकर्मा वधकर्मा'** अर्थात् 'अग्निमीडे पुरोहितम्' यह छन्द रश्मि (ध्वनि वा कम्पन) एक ऐसी प्राण रश्मि से उत्पन्न होती है, जो प्रकाशयुक्त होकर

गमन करती है और यदि कोई बाधक रश्मि या तरंग उसके सम्पर्क में आ जाए, तो उसको नष्ट कर देती है। ऐसी प्राण रश्मि से जो रश्मि आच्छादित होती है, उसको कहते हैं- मधुच्छन्दा। प्राण रश्मि बाधक पदार्थ को नष्ट करती है और प्रकाशयुक्त होकर गमन करती है, वह जिसे चारों ओर से घेरती है, उसे मधुच्छन्दा कहते हैं। उस रश्मि से यह 'अग्निमीडे पुरोहितम्...' रश्मि उत्पन्न हुई है।

यहाँ प्रकाशयुक्त होने का अर्थ यह नहीं है कि हम उसे देख लें। हर प्रकाश को हम नहीं देख सकते, क्योंकि हमारी देखने की एक सीमा है। हर ध्वनि कों हम नहीं सुन सकते, क्योंकि हमारी सुनने की भी एक सीमा है। हर कण (पार्टिकल) में से अव्यक्त प्रकाश की जो तरंगें निकल रही हैं, हम उन्हें नहीं देख सकते। यहाँ यह भी बता दूँ कि जो छन्द रश्मि जिस ऋषि रश्मि से उत्पन्न होती है, उसका भी उस पर प्रभाव होता है। जैसे जिस माता-पिता से जो सन्तान उत्पन्न होती है, उस सन्तान पर माता-पिता का प्रभाव भी होता है। वैसे ही जिस ऋषि रश्मि से जो छन्द रश्मि उत्पन्न होती है, उस छन्द रश्मि पर उस ऋषि रश्मि का भी प्रभाव होता है।

क्या ऋषि रश्मि से उत्पन्न रश्मि भी किसी के सापेक्ष ऋषि रश्मि हो सकती है? इसका उत्तर है- हाँ। ऋषि रश्मियाँ बहुत सूक्ष्म होती हैं और छन्द रश्मियाँ अपेक्षाकृत स्थूल होती हैं। कुछ छन्द रश्मियाँ ऐसी होती हैं, जो अन्य रश्मियों को भी उत्पन्न करती है। अनेक सूक्ष्म रश्मियों से स्थूल छन्द रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं। उनमें से गायत्री और अनुष्टुप् छन्द रश्मियाँ प्रमुख हैं। इन छन्द रश्मियों को वाक् रूप कहा है। ये रश्मियाँ अन्य रश्मियों को उत्पन्न करती हैं। गायत्री व अनुष्टुप् रश्मियाँ भी आठ प्रकार की होती हैं- दैवी, प्राजापत्या, आसुरी, साम्नी, आर्ची, आर्षी, ब्राह्मी और याजुषी। दैवी गायत्री सबका मूल हैं।

इस मन्त्र का देवता अग्नि है और छन्द गायत्री है। इसका अर्थ यह

हुआ कि जहाँ-जहाँ भी यह छन्द रश्मि उत्पन्न होगी, वहाँ-2 इसका देवता विद्यमान होगा। देवता क्या होता है? किसी भी मन्त्र का देवता होता है- उसका मुख्य प्रतिपाद्य विषय अर्थात् उस मन्त्र में किसके बारे में विशेष रूप से कहा गया है और उससे सृष्टि पर मुख्य रूप से क्या प्रभाव पड़ेगा? उस छन्द रश्मि से जो पदार्थ सबसे अधिक प्रभावित होता है, उसे उस छन्द रश्मि का देवता कहते हैं। इसका देवता अग्नि है, तो जब यह छन्द रश्मि उत्पन्न होगी, जहाँ भी उत्पन्न होगी, वहाँ अग्नि तत्त्व समृद्ध होगा वा उत्पन्न होगा। अग्नि तत्त्व के अनेक अर्थ होते हैं— ऊष्मा, प्रकाश, विद्युत्, प्राण आदि। आधिदैविक अर्थ में अर्थात् सृष्टि विज्ञान के अर्थ में जहाँ भी यह छन्द रश्मि उत्पन्न होगी, वहाँ अग्नितत्त्व समृद्ध, तेजस्वी वा बलवान् होगा और यदि उत्पन्न नहीं हुआ है तो उत्पन्न होगा।

अब जो प्रश्न किया गया था कि ईश्वर की चर्चा अथवा प्रशंसा यहाँ पर भी है। मैं संसार के वैदिक विद्वानों से यह कहना चाहता हूँ कि वेद को समझने में बड़ी भ्रान्तियाँ हुई हैं। कुछ लोग तो कहते हैं कि किसी मन्त्र का एक ही प्रकार का अर्थ होता है। हमारे यहाँ भी ऐसे हठी लोग बहुत हैं, वे इस बात को जानने और मानने के लिए तैयार ही नहीं हैं। वे न जानते हैं, न मानते हैं और समझने का प्रयास भी नहीं करते। ऐसे ही वैदिक विद्वानों ने आज के वैज्ञानिक युग में वेद को सर्वथा अप्रासंगिक बना दिया है। मैं उनसे कहना चाहूँगा कि किसी भी मन्त्र का स्वाभाविक और प्रथम भाष्य वा अर्थ आधिदैविक ही होता है, न आध्यात्मिक और न ही आधिभौतिक। ऐसा क्यों होता है? इसे समझने का प्रयत्न करते हैं-

कोई भी वेदमन्त्र सृष्टि में एक कम्पनरूप में है। कम्पन का सबसे पहला प्रभाव क्या हुआ? जैसे हमारे मोबाइल में कहीं से कोई तरंग आ रही है, यह हम पर तो बाद में प्रभाव डालेगी, लेकिन पहले जिन-जिन कणों से टकराकर आ रही है, उन पर क्या प्रभाव डालेगी, यह विचारणीय बात है।

वायुमण्डल में जो पार्टिकल्स वा मॉलिक्यूल्स हैं, उन पर ये मोबाइल की तरंगें क्या प्रभाव डालेंगी? मार्ग में वृक्ष, वनस्पति आदि आये होगें, उन पर क्या प्रभाव डाला होगा? फिर हमारे शरीर में कान के पर्दे से टकरायेंगी, पहला प्रभाव तो यह हुआ और उसके बाद उससे जो ज्ञान होगा, उसका हम पर क्या प्रभाव होगा, वह अगला प्रभाव होगा।

इस प्रकार किसी भी छन्द रश्मि का पहला अर्थ वा पहला प्रभाव आधिदैविक ही होता है अर्थात् किसी भी मन्त्र का स्वाभाविक भाष्य आधिदैविक ही होता है। उस स्वाभाविक भाष्य में कहीं भी ईश्वर की बात नहीं है। ईश्वर अपनी प्रशंसा नहीं कर रहा, क्योंकि वह स्वाभाविक भाष्य का अर्थ नहीं है, प्रभाव है और उस प्रभाव का हम अर्थ करेंगे, तो वह आधिदैविक पक्ष में ही आएगा। इसलिए जहाँ यह लगता है कि ईश्वर अपनी बात कह रहा है, अपनी स्तुति, प्रार्थना व उपासना करवा रहा है, वहाँ वह अर्थ द्वितीयक (सैकेण्डरी) अर्थ है। प्राथमिक अर्थ यह है कि उस रश्मि का सृष्टि पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। ऐसी बात न तो कोई बाइबिल वाला कह सकता है, न कुरान वाला और न ही कोई अन्य ग्रन्थ वाला कह सकता है। बाइबिल, कुरान आदि ग्रन्थों का सृष्टि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि सृष्टि तो करोड़ों वर्ष पूर्व ही बन गई थी और ये ग्रन्थ अब बने हैं।

अभी तक इस प्रश्न का उत्तर अभी अधूरा रहा, शेष चर्चा हम कल करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

4. ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र का वैज्ञानिक अर्थ

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! कल हम एक श्रोता के प्रश्न पर चर्चा कर रहे थे कि वेद में भी ईश्वर की प्रशंसा है, तो मैंने कहा था कि वेद के किसी भी मन्त्र का पहला वा स्वाभाविक अर्थ आधिदैविक ही होता है, क्योंकि वेदमन्त्र एक पदार्थ है। पदार्थ के बारे में थोड़ा और स्पष्ट कर दूँ, इसमें हमारे अनेक विद्वान् अत्यन्त भ्रमित हैं और वे बहुत हठ करते हुए कहते हैं कि नहीं, वेदमन्त्र उपादान कारण नहीं है। पहले तो कारण ही नहीं मानते और कॉल पर मुझे कहते हैं कि निमित्त मान लो, उपादान मत मानो। मैंने कहा कि उपादान क्यों नहीं मानें? उन्होंने पूछा- मन्त्र क्या है, क्रिया है या द्रव्य? तो मैंने कहा क्रियाशील द्रव्य ही मन्त्र हैं। वो फिर बोले ऐसा कैसे? यह तो क्रिया है, हलचल वा कम्पन है।

मैंने कहा एक व्यक्ति खड़ा हुआ है और वह दौड़ने लगे, तो उस व्यक्ति को क्या कहेगें? धावक। धावक कोई अन्य पदार्थ है या वही व्यक्ति है, जो खड़ा था। उसी खड़े हुए व्यक्ति का नाम हो गया- धावक अर्थात् दौड़ने वाला। यह सुनकर कॉल करने वाला चक्कर में पड़ गया। जब मनस्तत्त्व क्रियाशील हो उठता है, तो उसमें उत्पन्न कम्पन ही छन्द रश्मियाँ कहलाती हैं। अब बतायें कि रश्मि उपादान कारण हुई या निमित्त कारण? फिर वे मौन हो गये।

छन्द रश्मियाँ सृष्टि में निर्मित किसी भी पदार्थ, जो उन रश्मियों के बाद निर्मित हुआ है, का उपादान कारण हैं। आधुनिक विज्ञान की भाषा में कहें तो वह पदार्थ है- आकाश तत्त्व, जो छन्द रश्मियों से मिलकर बना है। रश्मियाँ किससे बनी हैं? मनस्तत्त्व से। मनस्तत्त्व किससे बना है? मूल प्रकृति

से। लेकिन बनाने वाला ईश्वर है, उसके बिना ये सब कदापि नहीं बन सकते। इसलिए किसी भी मन्त्र वा छन्द रश्मि का सबसे पहला प्रभाव केवल और केवल आधिदैविक ही होता है। अत: सबसे पहले हम आधिदैविक अर्थ की चर्चा करेंगे। जो लोग कहते हैं कि हम विज्ञान की नकल करते हैं, वे पहले हमारे ग्रन्थों को पढ़ लें और फिर अपनी विज्ञान की शीर्ष स्तर की पुस्तकें खोलकर बैठ जाएँ और मुझे बता दें कि जो मैं बोल रहा हूँ, यह विज्ञान की कौन-सी पुस्तक में लिखा हुआ है? मैं आपको इतना अवश्य कहूँगा कि वर्तमान में वैदिक व प्राचीन भारतीय विज्ञान पर शोध करने वाले प्राय: वर्तमान विज्ञान के पीछे चलने में ही स्वयं को धन्य मान रहे हैं, इस कारण लोग मेरे विषय में भी ऐसी ही भ्रान्त धारणा बना लेते हैं, जबकि मैं उन सबसे सर्वथा पृथक् हूँ तथा वेद व ऋषियों के महान् विज्ञान पर अभिमान करने वाला हूँ। ईशकृपया मुझे इस विज्ञान को समझने की कुञ्जी भी मिल गयी है।

'यज्ञस्य अग्निम् इळे' इसका सामान्य अर्थ है- यज्ञाग्नि की स्तुति करता हूँ, वह अग्नि पुरोहित, देव, होता, रत्नधातम है। अब यज्ञ क्या है, इस पद पर विचार करते हैं। महर्षि दयानन्द ने यजुर्वेद-भाष्य 2.21 में लिखा है- 'क्रियाकाण्डजन्यं संसारम्' सम्पूर्ण संसार ही यज्ञ है और ऋग्वेद भाष्य के पहले मण्डल के अठाहरवें सूक्त के सातवें मन्त्र में उन्होंने लिखा है- 'संगत: संसार:' अर्थात् संसार यज्ञ है। यह यज्ञ कैसे होता है? यज्ञ में हम क्या करते हैं? यज्ञ के लिये हम बहुत सारी जड़ी-बूटियाँ लाते हैं, बहुत सारे पदार्थों को एकत्र कर अग्नि में आहुत करते हैं, उससे पदार्थ अपने सूक्ष्म अणुओं में टूटकर गैसों के रूप में बिखर जाता है, यही यज्ञ है। वैसे ही परमात्मा ने प्रकृतिरूपी पदार्थ, जो सर्वत्र फैला हुआ था, उसमें क्रिया की और उस क्रिया के परिणामस्वरूप जो बना, वह है- सृष्टि वा ब्रह्माण्ड। ब्रह्माण्ड एक संगठित पदार्थ है, इसका संयोजक परमात्मा है और इसे जिस पदार्थ से बनाया, वह है- प्रकृति।

व्याकरण से यज्ञ का अर्थ होता है- देवपूजा, संगतिकरण और दान। विभिन्न देव पदार्थों अर्थात् सत्व-रज-तम गुणों से युक्त प्रकृति, प्रकृति से बने हुए पदार्थ- महत्, अहंकार, मन, छन्द व प्राण आदि रश्मियों की पूजा अर्थात् उनका उपयोग परमात्मा करता है। पूजा के अनेक अर्थ हैं, उपयोग करना भी उनमें से एक है। अब उपयोग कैसे करता है? जैसे जड़ी-बूटियों को लेकर एकत्रित किया, फिर उनका संगतिकरण अर्थात् उनको मिलाया, उससे हवन-सामग्री बनी। वैसे ही महत्, अहंकार, मन, प्राण एवं छन्द रश्मियाँ आदि सबको मिलाकर विशेष बुद्धिपूर्वक संयोग से सृष्टि बनी है। यज्ञ का तीसरा अर्थ क्या होता है? दान। ईश्वर ने सृष्टि बनाकर के हम जीवात्माओं को दान दे दी। इस प्रकार सम्पूर्ण सृष्टि यज्ञ है।

कोई नहीं जानता कि इस सृष्टि में कितने पार्टिकल्स, एटम्स, मॉलिक्यूल्स, फोटॉन्स आदि हैं? जब इनको ही कोई नहीं जानता, तो छन्द रश्मियाँ कितनी हैं, यह कोई कैसे जान सकता है? अर्थात् नहीं जान सकता, छन्द रश्मि को वर्तमान में कोई भी टेक्नोलॉजी न तो देख सकती और न ही अनुभव कर सकती। फिर प्राण और मरुद् रश्मियाँ, जो छन्द रश्मियों से भी सूक्ष्म हैं, वे कितनी हैं, यह भी कोई नहीं जान सकता।

मनस्तत्त्व, अहंकार व महत् का कितना विस्तार है, यह कोई नहीं जानता। इनसे भी बड़ा विस्तार प्रकृतिरूपी पदार्थ का है, उससे भी बड़ा विस्तार स्वयं परमात्मा का है। इन सब में परमात्मा चेतन है। इन सबसे परमात्मा ने प्रकृति को विकृत करके सृष्टि को बनाया है। किसी पदार्थ को विकृत करके ही अन्य पदार्थ बनाया जा सकता है। निर्विकार कभी पदार्थ का भाग नहीं बनता। जीवात्मा व परमात्मा निर्विकार हैं, इनसे कोई पदार्थ वा सृष्टि नहीं बनती, ये तो बनाने वाले हैं। जैसे हलवाई मिष्ठान्न, दाल-चावल, रोटी बनाता है, लेकिन वह हलवाई उस भोजन का अङ्ग नहीं बनता है। भोजन के अङ्ग तो पानी, आटा, तेल, घी, नमक, मसाले आदि हैं। अङ्गरूप तो प्रकृति

और उससे बने पदार्थ हैं। वैसे ही सृष्टि में परमात्मा है, जो सृष्टि को रच रहा है, इसलिए सम्पूर्ण सृष्टि यज्ञ है। वेद में कहा है- 'अयं होता प्रथम: पश्यत इदम्' अर्थात् देखो! यह परमात्मा सृष्टियज्ञ का सबसे पहला होता है अर्थात् आहुति देने वाला है। उसको देखो अर्थात् समझो। यह सृष्टियज्ञ है और इसका होता अग्नि है, अग्नि के बिना यज्ञ नहीं हो सकता। जैसे हवनकुण्ड की अग्नि के बिना यज्ञ नहीं हो सकता।

महर्षि यास्क 'अग्नि' का निर्वचन करते हुए लिखते हैं- 'अग्नि: कस्मात्? अग्रणीर्भवति। अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते। अङ्गं नयति सन्नममान: ।' अर्थात् जो सबसे आगे चलता है, सबका नेतृत्व करने वाला है, सबको अपने पीछे ले जाता है, वह अग्नि कहलाता है। किसी भी यज्ञ में अर्थात् संयोग और वियोग की प्रक्रिया में, चाहे वह कॉस्मोलॉजिकल, रासायनिक, भूगर्भीय, जैविक आदि कोई भी क्रिया हो, उसमें सबसे पहले अग्नि की आवश्यकता होती है। 'अङ्गं नयति सन्नममान:' अर्थात् अग्नि किसी अन्य पदार्थ को अपने साथ मिलाकर अपने जैसा बना लेता है वा अपनी ओर झुका लेता है। ऐसा अग्नि क्या हो सकता है? अग्नि के बहुत सारे अर्थ आयेंगे, जिनको हम एक-एक करके बतायेंगे।

अग्नि के विषय में ऐतरेय ब्रह्मण में महर्षि ऐतरेय महीदास ने कहा- 'अग्निर्वै देवानां वसिष्ठ:' अर्थात् अग्नि सब देव पदार्थों में सबको उत्पन्न और धारण करने वाला है। धारण करने वालों में अग्नि सर्वश्रेष्ठ है। महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं- 'अग्निर्वै देवानां मुखम् प्रजनयिता स प्रजापति:'। अग्नि विभिन्न देव पदार्थों यथा- कणों, तरंगों, आकाश आदि सबको उत्पन्न करने वाला है अर्थात् सबका मुख है। उसी अग्नि से ये देव पदार्थ जीवित रहते हैं अर्थात् अग्नि के बिना इन देव पदार्थों का अस्तित्व नहीं रहेगा, इसलिए उसका नाम अग्नि है। सबको उत्पन्न करने वाला होने से अग्नि को प्रजापति भी कहते हैं। अग्नि क्या है? इसका उत्तर महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने शतपथ ब्राह्मण में

दिया है- 'वाक् एवाग्नि:' अर्थात् वाक् तत्त्व वा रश्मियाँ अर्थात् छन्द रश्मियाँ अग्नि हैं। ये अग्नि इसलिए हैं, क्योंकि सर्वप्रथम यही वाक् तत्त्व कम्पन के रूप में उत्पन्न होता है और फिर यही अन्य कम्पनों को उत्पन्न करता है।

'अग्रणीर्भवति' अर्थात् एक रश्मि, अन्य रश्मियों को आगे ले जाती है अथवा अपने पीछे ले आती है और जब संयोग-वियोग की प्रक्रिया होती है, तब रश्मियों के इसी गुण के कारण रश्मियों का विनिमय होता है। अब भौतिक विज्ञान की जानकारी रखने वाले कहेंगे कि मौलिक बल चार हैं, उनमें से संयोग-वियोग की क्रिया में सबसे अधिक तो विद्युत् चुम्बकीय बल ही काम करता है। लेकिन यह विद्युत् चुम्बकीय बल क्या है? उसका स्वरूप क्या है? यह कैसे कार्य करता है? क्यों उत्पन्न होता है? आदि प्रश्नों के उत्तर कोई नहीं जानता। कोई जानता हो, तो हमें बताये। मीडियेटर कण कैसे बनते हैं, इनका क्रियाविज्ञान क्या है? यह भी कोई नहीं जानता। लेकिन हम बता सकते हैं कि ये कण भी वाक् रश्मियों से मिलकर बनते हैं। वाक्, छन्द एवं प्राण आदि रश्मियों के कारण ही मीडियेटर कणों का एक-दूसरे में विनिमय होता रहता है अर्थात् ये एक्सचेंज होते रहते हैं।

अगर कोई कहे कि छन्द रश्मियाँ तो मन अर्थात् समष्टि मन के अन्दर उत्पन्न होती हैं। इस विषय में **महर्षि याज्ञवल्क्य** लिखते हैं- 'मन एवाग्नि:' अर्थात् छन्द रश्मियों से भी पहले उनको आगे ले जाने वाला मनस्तत्त्व है। फिर शतपथ ब्राह्मण में महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं- 'अग्निरेव ब्रह्मा' अग्नि ही ब्रह्मा है अर्थात् ये वाक् रश्मियाँ ही सबसे व्यापक और शक्तिशाली होती हैं, इनका बल ही सर्वाधिक व्यापक होता है। महर्षि का इनके विषय में एक और कथन है- 'आत्मैवाग्नि:'। आत्मा के यहाँ दो अर्थ हैं- एक तो परमात्मा, जिसे हम आध्यात्मिक अर्थ में लेंगे। आत्मा का दूसरा अर्थ है- सूत्रात्मा वायु। सूत्रात्मा वायु रश्मियाँ सभी प्राण एवं छन्द रश्मियों से भी सूक्ष्म होती हैं। इस प्रकार अग्नि के वाक्, मन, आत्मा आदि अनेक अर्थ हो सकते हैं। सृष्टि

निर्माण में विभिन्न स्तरों पर अग्नि के भिन्न-भिन्न रूप होते हैं।

अब हम पहले चरण को देखते हैं। पहले चरण में अग्नि क्या है? वाक्। कौनसी वाक्? परा 'ओम्' । परा 'ओम्' रश्मि ही अग्नि का प्रथम रूप है। परा 'ओम्' रश्मि मन से भी पहला अग्नि है, क्योंकि यह प्रकृति में उत्पन्न होती है। इसके प्रकृति में उत्पन्न हो जाने के बाद परा 'ओम्' रश्मियों से युक्त प्रकृति पदार्थ ही महत् कहलाता है, जो मनस्तत्त्व से पूर्व की एक अवस्था है। सृष्टि में सबसे पहले अग्नि अर्थात् परा 'ओम्' रश्मि के बिना कुछ भी निर्माण नहीं हो सकता, इसलिए वही सबका अग्रणी अर्थात् सबको आगे लेकर चलने वाला है। इस रश्मि के उत्पन्न होने के बाद ही हलचल प्रारम्भ होती है और उसके बाद ही प्रकृति में विकार शुरू होता है और सृष्टि निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

दूसरा अग्नि क्या है? दूसरा अग्नि है- समष्टि मन। जब सम्पूर्ण सृष्टि वा प्रकृति पदार्थ में परा 'ओम्' रश्मियाँ सर्वत्र उत्पन्न हो जाती हैं, प्रकृति की उस अवस्था का नाम है-महत्, जिसका अग्रिम चरण है- अहंकार और उसका अगला चरण है- मन। तीनों को क्रमशः ऐसे समझ सकते हैं- जैसे एक कच्चा आम है, एक अधपका आम है और एक पूर्ण रूप से पका हुआ आम है। यहाँ मनस्तत्त्व को भी अग्नि कहा, क्योंकि जब तक मनस्तत्त्व नहीं बनेगा, तब तक उसमें कोई भी रश्मि उत्पन्न नहीं हो सकती। अब तृतीय अग्नि क्या है? वह है- आत्मा। आधिदैविक भाष्य में इसका अर्थ परमात्मा नहीं लेंगे, यह अर्थ आध्यात्मिक में लेंगे। यहाँ पर हम इसका अर्थ सूत्रात्मा वायु ही लेंगे। वैसे तो मनस्तत्त्व के बाद और भी रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं, जैसे- 'भूः', 'भुवः', 'स्वः' आदि, लेकिन ग्यारह प्राण रश्मियों में सूत्रात्मा वायु सबसे प्रथम उत्पन्न होता है, इसलिए यह भी अग्नि है।

इससे अगला अग्नि किसे कहा गया? चौथा अग्नि है- प्राण। सूत्रात्मा वायु के बाद प्राण नामक प्राथमिक प्राण ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होता

है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा है- 'प्राणो वै सम्राट् परमं ब्रह्म' अर्थात् प्राणतत्त्व ही ब्रह्म वा ब्रह्मा है, उधर महर्षि तित्तिर ने कहा 'बलम् वै ब्रह्मा' अर्थात् बल ही ब्रह्मा है अर्थात् प्राणरूप अग्नि ही ब्रह्मा है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि जब तक सृष्टि में बल की उत्पत्ति नहीं होती, तब तक सृष्टि आगे नहीं बढ़ती। आज का विज्ञान केवल चार प्रकार के बल ही जानता है, जबकि वैदिक भौतिकी में नौ बल हैं।

इससे सिद्ध होता है कि हम आधुनिक विज्ञान का अनुकरण नहीं करते। आधुनिक विज्ञान के पक्षधर सुनें कि एक दिन उनको वैदिक भौतिकी के पीछे आना पड़ेगा और जब तक वे ऐसा नहीं करेंगे, तब तक आगे नहीं बढ़ सकते। मैं किसी को अनुकरण करने के लिए नहीं कह रहा, मैं बस इतना कह रहा हूँ कि आप वैदिक विज्ञान का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करें। यदि आपको लगे कि हमारी बातें तर्कसंगत हैं, आपकी भौतिकी एवं आपके लिए लाभदायक हैं, आपको कोई नई दिशा दे सकती हैं और ऐसे परिणाम दे सकती हैं, जो आपकी बड़ी-2 लैब नहीं दे पा रही हैं, तो हमारी बातों पर एक बार विचार करें।

सृष्टि का सबसे पहला और मूल बल ईश्वर का है, उसको यहाँ नहीं लेंगे, यह अध्यात्म का विषय हो जायेगा। परा ओम् रश्मि के द्वारा जो बल उत्पन्न होता है, वह बल अग्नि है। अग्नि का एक अर्थ विद्युत् भी है। जब तक विद्युत् आवेश उत्पन्न नहीं होगा, तब तक कण आपस में नहीं मिलेंगे। अग्नि का एक और अर्थ है- ऊष्मा। अलग-अलग स्तर पर अग्नि के अलग-अलग अर्थ होते हैं। अग्नि के अर्थों की विवेचना के पश्चात् इसके क्या-क्या विशेषण हैं, यह हम कल बतायेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

5. प्रथम वेदमन्त्र का वैज्ञानिक रहस्य

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! कल हमने चर्चा की थी कि ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में अग्नि के छः अर्थ हैं और ये छः प्रकार के अग्नि पृथक्-पृथक् स्तरों पर संयोग-वियोग की प्रक्रिया के लिए सबसे पहले आवश्यक होते हैं। हमने अग्नि का अन्तिम अर्थ ऊष्मा बताया था। आधुनिक विज्ञान भी इस बात को जानता है कि जब तक ऊष्मा उत्पन्न नहीं होगी, तब तक सृष्टि की उत्पत्ति सम्भव नहीं है।

आधुनिक विज्ञान स्वीकार करता है कि जब तक इस ब्रह्माण्ड में विद्युत् आवेश उत्पन्न नहीं होता, तब तक कोई भी पदार्थ उत्पन्न नहीं होता, लेकिन ऊष्मा अथवा फोटोन वैदिक विज्ञान की दृष्टि से बहुत स्थूल है। जो लोग यह सोचते हैं कि हम आधुनिक विज्ञान के पीछे चलते हैं और उन्हीं बातों को खोजते हैं, जो आधुनिक विज्ञान खोज चुका होता है। वे इतना जान लें कि हमने अग्नि के जो चार अर्थ वाक्, मन, प्राण और सूत्रात्मा वायु बताये हैं, इन सबसे आधुनिक भौतिक विज्ञान पूर्णतः अनभिज्ञ है। आधुनिक भौतिकी की सृष्टि को समझने की सीमा जहाँ समाप्त होती है, वहाँ से वैदिक भौतिकी प्रारम्भ होती है। वैदिक भौतिकी मूलकणों से छह स्तर सूक्ष्म पदार्थ की व्याख्या कर सकती है। इस प्रकार वैदिक भौतिकी आधुनिक विज्ञान से छह स्तर आगे सृष्टि को समझा सकती है।

इस मन्त्र में अग्नि के विशेषण- पुरोहित, देव, ऋत्विज, होता और रत्नधातम बताये हैं। अब इसके विषय में चर्चा करते हैं।

1. पुरोहित- अग्नि का सबसे पहला विशेषण 'पुरोहित' है। पुरोहित किसको

कहते हैं? आजकल यह शब्द कथित जातिसूचक बन गया है। एक जगह सुना है कि इस मन्त्र को देखकर लोग कहते हैं कि यह पुरोहित का मन्त्र है। ऐसी-ऐसी अनपढ़ों की अनेक धारणाएँ हमारे देश में प्रचलित हैं। 'पुरोहित' शब्द का अर्थ होता है- '**यः पुरस्तात् सर्वं जगद् दधाति छेदनाकर्षणगुणाभ्याम्**'। यह निर्वचन ऋषि दयानन्द ने किया है। इसी मन्त्र के भाष्य में उन्होंने कहा है- जो इस जगत् को पहले से धारण करता है, जिसके छेदन, धारण, आकर्षण, प्रतिकर्षण आदि गुण हैं, वह पुरोहित कहलाता है।

निरुक्तकार 'पुरोहित' का निर्वचन करते हुए कहते हैं- '**पुरोहितः पुर एनं दधति**' अर्थात् जो किसी पदार्थ को सम्मुख से धारण करता है। महर्षि जैमिनी भी यही कह रहे हैं- '**प्रथमः पुरोहितमिति पुर एव वा एनमेतद् दधते। यदग्निमादधते**' अर्थात् जो किसी पदार्थ को सामने से वा सम्मुख से धारण करता है, वह पुरोहित कहलाता है। जैसे हम किसी पदार्थ या किसी व्यक्ति को पकड़ते हैं, तो हम अपने सामने की दिशा से पकड़ेंगे, पीछे से नहीं। वैसे ही अग्नि पदार्थ चाहे, वह वाक्, मन, प्राण, सूत्रात्मा वायु, विद्युत्, ऊष्मा कोई भी हो, इन सबके सम्मुख जो भी पदार्थ आएगा, उसको ये उसके सम्मुख से ग्रहण वा धारण करते हैं, आकर्षित अथवा प्रतिकर्षित करते हैं।

पहले वाक् को लेते हैं। वाक् क्या है? सबसे पहली वाक् है- 'ओम्'। जितने वेदमन्त्र व छन्द रश्मियाँ हैं, वे सभी वाक् रूप हैं, लेकिन उनमें सबसे पहली वाक् 'ओम्' है। इससे पहले इस ब्रह्माण्ड में कोई भी कम्पन नहीं होता। आधुनिक वैज्ञानिक भी मानते हैं कि ध्वनि तरंगों वा पदार्थ के फ्लक्चुएशन (कम्पन) से ही सृष्टि बनी है। कॉस्मिक बैकग्राउण्ड रेडिएशन का कारण भी ध्वनि तरंगें हैं। कुछ वैज्ञानिक कहते हैं कि डार्क मैटर से भी ध्वनि तरंगें निकलती हैं। हम कहते हैं कि उनमें से ही नहीं, हर पदार्थ में से ध्वनि तरंगें निकलती हैं। उन वैज्ञानिकों को यह नहीं पता कि वे ध्वनि तरंगें कौन सी हैं? ध्वनि तरंगें यदि किसी कण में से निकलती हैं, तो निश्चित ही

वे वाणी की मध्यमा अवस्था में होंगी। उससे पहले वे पश्यन्ती अवस्था में होती हैं। जब कण नहीं बनते, तब भी ध्वनि तरंगें होती हैं।

किसी ने टिप्पणी की थी कि ध्वनि तरंग वा कम्पन के लिए तो कोई माध्यम होना चाहिए। हाँ, वैखरी तरंगों वा ध्वनियों के लिये माध्यम चाहिये हैं, जैसे- हवा, पानी, धातु या और कोई ठोस, द्रव व गैस रूप पदार्थ। इनके बिना हमें वाणी सुनाई नहीं देगी, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वाणी उत्पन्न ही नहीं होगी। वैखरी के पश्चात् वाणी की मध्यमा अवस्था आती है, जिसके लिए इन सब माध्यमों की आवश्यकता नहीं होती, वे इलेक्ट्रिक सिग्नल के रूप में गमन करती हैं। मध्यमा वाणी के गमन करने के लिए कौनसा माध्यम चाहिए? इसके लिए आकाश तत्त्व अर्थात् स्पेस चाहिए। वाणी की मध्यमा से भी जो सूक्ष्म अवस्था है, वह है- पश्यन्ती। मैं वाणी को ध्वनि या साउण्ड नहीं कहता, इसके लिए वैदिक शब्द 'वाक्' है। वाणी के इस सूक्ष्म स्तर के लिए आकाश भी नहीं चाहिए। स्पेस अर्थात् आकाश एक निर्मित पदार्थ है, इसका अर्थ रिक्त स्थान नहीं है।

आकाश एक ऐसा पदार्थ है, जो फैलता व सिकुड़ता है और इसमें से कण, तरंग आदि बिना किसी बाधा के आर-पार चले जाते हैं। आकाश सम्पूर्ण रिक्त स्थान को भरे हुए है, लेकिन वह स्वयं रिक्त नहीं है। वह हमारे लिये और कण, तरंग आदि इन सबके लिए रिक्त वा खालीपन है, लेकिन उससे भी सूक्ष्म छन्द व प्राण रश्मियों और मन के लिए वह खालीपन नहीं है, क्योंकि मन, प्राण व सूक्ष्म छन्द रश्मियों आदि से ही वह आकाश तत्त्व (स्पेस) बनता है। पश्यन्ती वाक् के लिए मनस्तत्त्व माध्यम के रूप में चाहिए, जो सम्पूर्ण सृष्टि में भरा हुआ है। परा वाणी के लिए प्रकृति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं चाहिए।

प्रकृति अर्थात् मूल पदार्थ, जिसके विषय में आधुनिक विज्ञान न तो जानता है और न ही कभी अपने भौतिक उपकरणों से जान सकता है, उस

मूल पदार्थ में सर्वप्रथम जो कम्पन हुआ, वह है- परा 'ओम्' रश्मि अर्थात् उस समय सृष्टि का प्रथम अग्नि उत्पन्न हुआ और वह अग्नि क्या करता है? इसी मन्त्र के भाष्य में ऋषि दयानन्द ने पुरोहित शब्द का अर्थ करते हुए परा 'ओम्' रश्मि वा अग्नि के आठ गुण बताए हैं, जो इस प्रकार हैं- रूप (किसी का दिखाई देना), आकाश (आकार), दाह (गर्मी), प्रकाश, वेग, छेदन, धारण और आकर्षण आदि। यहाँ आदि से हम प्रतिकर्षण गुण ग्रहण करेंगे।

अब इन आठ गुणों में से प्रकाश कैसे उत्पन्न होता है, इसको कोई नहीं जानता। वर्तमान वैज्ञानिक कहते हैं कि फोटोन परावर्तित होकर हमारी आँख में गए, यहाँ तक ठीक है, लेकिन फोटोन में यह गुण कहाँ से आया कि वह किसी वस्तु के रूप को दिखाए? उसमें प्रकाश का गुण कहाँ से आया? उसमें ऊष्मा का गुण कहाँ से आया? उसमें और किसी अन्य कण में क्या भेद है या एक्स-रे और रेडियो आदि तरंगों में क्या भेद है? क्या वह भेद केवल आवृत्ति का है? अगर आवृत्ति का भेद है, तो आवृत्ति में अन्तर क्यों आया?

एक मोटरसाइकिल 100 कि.मी. प्रति घण्टे की गति से चलती है और हवाई जहाज 700-800 कि.मी. प्रति घण्टे की गति से चलता है। दोनों में क्या अन्तर है? दोनों की गतियों में क्या अन्तर है? क्या यही अन्तर है कि एक हवाई जहाज है और दूसरी मोटर-साइकिल? या किसी और कारण से अन्तर है? आप जानते हैं कि इसका कारण उनकी संरचना में अन्तर है। अगर मोटरसाइकिल और हवाई जहाज की संरचना में अन्तर नहीं होता, तो कभी भी हवाई जहाज, मोटरसाइकिल से अधिक तेज नहीं चल सकता था। दो कारों की स्पीड में अन्तर है, इसका अर्थ यह है कि उनकी संरचना में भी अन्तर है। विद्युत् चुम्बकीय तरंग चाहे, वह रेडियो तरंग हो या एक्स-रे या गामा या अल्ट्रा वॉयलेट आदि कोई भी हो, उनकी स्पीड में अन्तर नहीं है, लेकिन उनके गुणों में अन्तर है। गुणों में अन्तर अर्थात् उनकी आवृत्ति में

अन्तर है। आवृत्ति में अन्तर क्यों हैं? स्पष्ट है कि कहीं न कहीं उनकी जो आन्तरिक संरचना है, उसमें अन्तर है और आन्तरिक संरचना के बारे में कोई नहीं जानता। यदि कोई जानता है, तो हमें बताये।

हम बताते हैं कि इन तरंगों या किसी भी कण की आन्तरिक संरचना क्या है? ये सभी छन्द और प्राण रश्मियों/कम्पनों से बने हैं और वे जो भी क्रिया करते हैं, वह आन्तरिक संरचना के कारण ही करते हैं। मैं बोल रहा हूँ तो क्या इसमें मेरी आन्तरिक संरचना की भूमिका नहीं है? अगर मेरा कण्ठ खराब हो जाए, तो मैं नहीं बोल सकता या मस्तिष्क का जो भाग बुलवाता है, वह खराब हो जाए, तो भी मैं बोल नहीं सकता। एक व्यक्ति बहुत तेज दौड़ सकता है, एक व्यक्ति से चला भी नहीं जाता, क्योंकि दोनों के संरचना में अन्तर है। जिन दो कणों वा तरंगों के गुणों में यदि भेद है, तब निश्चित ही वे दोनों भिन्न-2 रश्मियों से बने हैं, लेकिन उनमें एक बात समान है कि दोनों में 'ओम्' रश्मियाँ हैं। जब कोई भी क्रिया होती है, जैसे मान लीजिए मैंने इस मेज को बजाया और मेज को बजाने से आवाज निकली। कोई बताए कि आवाज कैसे आयी? इसकी व्याख्या मैं नहीं करूँगा, परन्तु इसमें से जो तरंगें निकलीं, उनके अन्दर जो रश्मियाँ हैं और उन रश्मियों के अन्दर भी जो सबसे अन्तिम रश्मि है, जिसकी इस ब्रह्माण्ड में मूलभूत भूमिका है, वह है- 'ओम्' रश्मि।

'ओम्' रश्मि के बिना कोई भी क्रिया इस ब्रह्माण्ड में न तो कभी हुई और न कभी हो सकती है। इसलिए जो लोग यह कहते हैं कि ईश्वर की इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता, यह बिल्कुल सत्य है। लेकिन उसकी इच्छा ऐसी नहीं है, जैसी हम मनुष्यों की इच्छा होती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम कुछ नहीं हैं, हम भी चेतन हैं। हमारे शरीर में जो इच्छा व प्रयत्न होते हैं, वे हमारे अपने हैं, ईश्वर के नहीं। लेकिन हमारा शरीर जो कणों से मिलकर बना है, उसके अन्दर जो क्रियाएँ हो रही हैं, उनमें अन्तिम भूमिका 'ओम्' रश्मि की होती है। जैसे मैंने इस पुस्तक को उठाया, यहाँ हाथ की

भूमिका है, लेकिन हाथ के पीछे किसकी भूमिका है? मांसपेशियों की। मांसपेशियों के पीछे किसकी भूमिका है? विद्युत् चुम्बकीय बल की। उसके पीछे किसी भूमिका है? बहुत सारी छन्द रश्मियों की। उनके पीछे किसी भूमिका है? इस प्रकार अन्त में 'ओम्' रश्मि की ही भूमिका आयेगी। इसलिए 'ओम्' रश्मि किसी भी पदार्थ को आगे से धारण करती है, चाहे वह फोटोन हो या इलेक्ट्रोन या कोई भी अन्य छन्द रश्मियाँ। इसलिए वाक् तत्त्व (परा 'ओम्') ही अग्नि है और यही पुरोहित है। अग्नि के लिए 'पुरोहित' शब्द यहाँ सार्थक हो रहा है।

अब मन पर विचार करते हैं। मन क्या है? मन एक पदार्थ है। वाक् तो मन या प्रकृति के अन्दर हुआ कम्पन है, लेकिन मन वह पदार्थ है, जो कम्पित वा स्पन्दित होती प्रकृति का रूप है। महत्, अहंकार व मन तीनों एक ही हैं, बस थोड़ा-2 स्तर का भेद है। मन में वाक् है और वाक् में मन है। इस बात को इस प्रकार समझें, जैसे आप तालाब के किनारे खड़े हो या समुद्र की लहरों को देख रहे हो, तो लहर क्या है? लहरों के अन्दर पानी है और पानी के अन्दर लहरें हैं अर्थात् लहर पानी से अलग नहीं है और पानी लहरों से अलग नहीं है। फिर लहर और पानी में अन्तर क्या है? अन्तर यह है कि जब पानी में स्पन्दन नहीं है, तब भी वह पानी है। पानी लहर तब बना, जब वो स्पन्दित होता है।

इसी प्रकार स्पन्दित होता हुआ मन ही वाक् रूप है। इसलिए **महर्षि जैमिनी** को कहना पड़ा- **'वागिति मनः'** अर्थात् यह वाक् ही मन है और **महर्षि ऐतरेय महीदास** ने कहा- **'वाक् च मनश्च देवानां मिथुनम्'** अर्थात् वाक् और मन, इन दोनों का युग्म है। जब तक मन में स्पन्दन नहीं है, तब तक उससे कुछ नहीं बन सकता। स्पन्दन होगा, तभी सृष्टि बनेगी। जैसे यदि हम सोते रहें, हमारे हाथ-पैर हिलें नहीं, तब हमारे होने या नहीं होने का कोई अर्थ नहीं है। लेकिन जैसे ही हममें हरकत आएगी, स्पन्दन होगा, तभी हम

कोई कार्य कर पायेगें। वैसे ही वाक् से युक्त मन ही सृष्टि के अग्रिम चरण के पदार्थों को उत्पन्न करता है। इसलिए यह मन भी अग्नि का रूप है और इसीलिए इसे भी पुरोहित कहा है। मन के बिना वाक् उत्पन्न नहीं हो सकती। ध्यान रहे, यहाँ पश्यन्ती वाक् की बात चल रही है, परा वाक् की नहीं।

अग्नि का तीसरा रूप है- आत्मा। यहाँ आधिदैविक पक्ष में आत्मा का अर्थ है- सूत्रात्मा वायु। मन के बाद ग्यारह प्रकार की प्राण रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं, उनमें से पहला स्थान सूत्रात्मा वायु का आता है। सूत्रात्मा का क्या अर्थ है और इसके गुण क्या होते हैं? इस विषय में चर्चा कल करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

6. एक मन्त्र में इतना विज्ञान!

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! कल हम अग्नि के तीसरे रूप आत्मा की चर्चा कर रहे थे और कह रहे थे कि आधिदैविक अर्थ में आत्मा का अर्थ सूत्रात्मा वायु है। यह रश्मि ग्यारह प्राण रश्मियों में पहली रश्मि है और इसका कार्य किसी भी पदार्थ को आकर्षित करना है। इस ब्रह्माण्ड में जहाँ कहीं भी आकर्षण बल है, वहाँ मन और वाक् तो होते ही हैं, लेकिन सूत्रात्मा वायु भी अवश्य विद्यमान रहता है। इसकी रश्मियाँ इस प्रकार की होती हैं कि एक रश्मि में से दूसरी निकलती है, जैसे वृक्ष का तना, फिर शाखाएँ और फिर प्रशाखाएँ। जब दो कण निकट आते हैं, तब उनमें से बहुत सारी रश्मियाँ निकलती हैं, लेकिन उन कणों को बाँधने का कार्य सूत्रात्मा वायु करता है। जैसे एक घड़ी है, घड़ी के चारों ओर भी सूत्रात्मा वायु का घेरा होता है।

सृष्टि में जितने भी लोक-लोकान्तर, ग्रह-उपग्रह, तारे, कण, फोटोन्स आदि हैं, सब सूत्रात्मा वायु से घिरे हुए हैं। जैसे हमारा शरीर चमड़ी से घिरा हुआ है। केवल सूत्रात्मा वायु ही नहीं, इससे बड़ी भी कुछ रश्मियाँ होती हैं, उनमें बृहती का नाम मुख्य है। लेकिन यहाँ प्रथम की बात चल रही है, इसलिए सूत्रात्मा वायु को अग्नि कहा है। जब दो कण संयोग हेतु निकट आते हैं, तब दोनों के चारों ओर सूत्रात्मा वायु का घेरा होता है। दोनों कणों के निकट आने पर सूत्रात्मा वायु बीच में से हटकर एक संयुक्त आवरण बना लेता है।

जो अग्नि के गुण हैं, वे सूत्रात्मा वायु में भी हैं। अग्नि भी आगे से ही पकड़ता है और सूत्रात्मा वायु भी। जैसे दो संयोज्य कण हैं, इन दोनों में से रश्मियाँ निकलती हैं, इन रश्मियों को सूत्रात्मा वायु आगे से पकड़ता है और

इस प्रकार दोनों कणों को पकड़ कर संयुक्त कर देता है, इसलिए सूत्रात्मा वायु पुरोहित है और सूत्रात्मा वायु रूप अग्नि भी पुरोहित है।

सूत्रात्मा वायु के बाद, जो अग्रिम प्राण रश्मि उत्पन्न होती है, उसका नाम है- धनञ्जय। धनञ्जय के बाद उत्पन्न होने वाली दस रश्मियों को मिला कर ग्यारह रश्मियों को प्राण कहते हैं, लेकिन उन ग्यारह में से एक रश्मि का स्वयं का नाम भी प्राण है। जब पाँच मुख्य प्राणों की चर्चा आएगी, तो प्राण, अपान, व्यान, उदान व समान का ग्रहण करेंगे। जब सात मुख्य प्राण कहते हैं, तो सूत्रात्मा एवं धनञ्जय और जुड़ जायेंगे और जब ग्यारह प्राण की बात करेंगे, तो नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय ये पाँच उपप्राण भी जुड़ जायेंगे। प्राण रश्मि का गुण यह है कि इसमें आकर्षण बल होता है। अपान में प्रतिकर्षण बल होता है।

हम 'बिग बैंग थ्योरी' को नहीं मानते। 'बिग बैंग थ्योरी' के नाम पर दुनिया में बहुत झूठ चल रहा है। स्पेस फैल रहा है, पदार्थ फैल रहा है अथवा जो भी फैल रहा है, उसकी चर्चा हम यहाँ नहीं करेंगे। वैदिक भौतिकी के अनुसार, जब सृष्टि उत्पत्ति होती है, तो पदार्थ फैलता नहीं है, बल्कि सिकुड़ता है। प्रलयावस्था में पदार्थ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में फैला हुआ था, फिर वह संघनित अर्थात् कण्डेन्स हुआ। संघनन होने से सृष्टि बनती है। फैलता हुआ पदार्थ कैसे आपस में संघनित होकर कोई कण वा तारा बन सकता है? इस कथित सिद्धान्त के पीछे कोई तर्क नहीं है।

अब पदार्थ संघनित कैसे हुआ? वह ऐसे, जैसे दही को बिलौने से पहले मक्खन सारे दही में होता है, लेकिन जब बिलौना करते हैं, तो दही में से संघनित होकर, उसके कण आपस में जुड़-2 कर, उससे अलग होकर मक्खन ऊपर आ जाता है। इसी प्रकार जब सृष्टि में विक्षोभ वा हलचल होती है, जब मनस्तत्त्व में कम्पन होने लगता है, तब विभिन्न प्रकार की रश्मियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, चाहे वे प्राण रश्मियाँ हों या छन्द रश्मियाँ। ये छन्द ही

वेदमन्त्र हैं, जिनमें से एक यह भी है- 'अग्निमीळे पुरोहितम्...'। इन सबमें प्राण रश्मियों की भूमिका बहुत अधिक होती है। इसलिए यह प्राण रश्मि भी पुरोहित है, क्योंकि यह किसी भी कण अथवा फोटोन के आगे गमन करती है।

अगर किसी वैज्ञानिक से पूछें कि फोटोन लगातार क्यों चलता है? इसका कोई निश्चित उत्तर उनके पास नहीं है। मैंने एक पत्थर उठाया और उसे फेंक दिया। मैंने उस पत्थर को क्या दिया कि वह आगे जा रहा है? आप कहेंगे कि गतिज ऊर्जा। फिर प्रश्न आयेगा कि गतिज ऊर्जा होती क्या है? यह तो आपने नाम रख दिया। वह गतिज ऊर्जा है क्या, जो मेरे हाथ से उस पत्थर में स्थानान्तरित हुई है? प्रत्येक कण के आगे प्राण और अपान रश्मि रास्ता बनाते हुए चलती हैं। आगे रहते हुए ये रश्मियाँ उन कणों को धारण करते हुए ले चलती हैं। जैसे जब कोई विशिष्ट व्यक्ति जाता है, तो पुलिस की गाड़ी रास्ता खाली कराती हुई आगे-2 चलती है, वैसे ही कुछ रश्मियाँ आगे-2 चलती हैं, उनमें से एक प्राण रश्मि भी है। इस प्रकार यह प्राण भी पुरोहित का कार्य करता है।

अब अगला आता है- विद्युत्। विद्युत् क्या है? इसकी कोई परिभाषा आधुनिक भौतिकी में नहीं है। रिचर्ड पी. फाइनमेन ने लिखा है कि विद्युत् क्या है, इसको हम परिभाषित नहीं कर सकते और इसका स्वरूप क्या है, यह हम ठीक-ठीक नहीं बता सकते। जब मैं ग्यारहवीं कक्षा का छात्र था, तब मैंने रुड़की विश्वविद्यालय के भौतिक विभाग से प्रश्न किया था कि चार्ज क्या होता है? कैसे उत्पन्न होता है? सबसे पहले इसको कौन उत्पन्न करता है? तो विभाग के रीडर ने उत्तर दिया था कि चार्ज एक मूलभूत मात्रा है, जिसको संसार में कोई नहीं जानता है। इसे कैसे और किसने उत्पन्न किया, इसका उत्तर तो यही हो सकता है कि इसे भगवान् ने उत्पन्न किया है। वह पत्र आज भी मेरे पास है। विद्युत् का अर्थ बहुत व्यापक है, यहाँ उसकी चर्चा

नहीं करेंगे।

आधुनिक विज्ञान कहता है कि जब दो धन और ऋण आवेशित कणों के मध्य आकर्षण होता है, तब मीडियेटर कणों का विनिमय होता रहता है। वे संयोज्य कण भी उन कणों को उसी दिशा से आकर्षित करते हैं, जिस दिशा में वे कण बढ़ रहे होते हैं। दोनों कणों से रश्मियाँ निकल रही होती हैं, तो मीडियेटर कण भी उसी दिशा से ही आकर्षित करेगा, दूसरी ओर से नहीं। इस कारण विद्युत् भी पुरोहित है, जो सबको आगे से धारण व पोषण करने वाला है। इसके बिना चार्ज/आवेश समाप्त हो जाएगा। अगर ब्रह्माण्ड में आवेश समाप्त हो जाए, तो संसार बिखर जाएगा, कुछ भी नहीं बचेगा। इसलिए विद्युत् आवेश भी पुरोहित का काम करता है और यह भी अग्नि है।

अब तक मैंने जो कहा, वह आधुनिक विज्ञान से बहुत आगे का है और अब जो बता रहा हूँ, वहाँ तक आधुनिक विज्ञान की पहुँच तो है, लेकिन वह पहुँच भी अधूरी है, क्योंकि उन्हें नहीं पता कि विद्युत् चुम्बकीय बल, प्रबल नाभिकीय बल आदि कैसे काम करते हैं, उनका क्रिया-विज्ञान क्या है। गुरुत्वीय बल कैसे कार्य करता है, क्यों करता हैं, यह सब उन्हें नहीं पता।

ऊष्मा की विद्यमानता में ही सभी कार्य सम्पन्न होते हैं। यदि ऊष्मा समाप्त हो जाए, तो ब्रह्माण्ड में कोई भी क्रिया नहीं होगी। समाप्त होने का यह अर्थ नहीं है कि 0° सेन्टीग्रेड हो जाए, यह तो हमने मापा है। अनन्त शीतलता हो जाए, तो कुछ भी कम्पन नहीं होगा। इस प्रकार यह अग्नि पुरोहित भी है।

2. देवम्- अब अग्नि का दूसरा विशेषण है- देवम्। अग्नि भी देव है। देव के लिए महर्षि यास्क ने लिखा है- 'देवो दानाद्वा। दीपनाद्वा। द्योतनाद्वा। द्युस्थानो भवतीति वा। यो देवः सा देवता।' (नि.7.15) अर्थात् जो पदार्थ बल का देने वाला, दूसरों को प्रकाशित करने वाला तथा द्युस्थानीय होता है, उसे देव कहते हैं। द्युस्थानीय का अर्थ है कि वह द्युलोक में रहता है, वह देव है। अब द्युलोक क्या है, इसके विषय में समझते हैं। **महर्षि जैमिनी** ने कहा-

'वागिति द्यौः' अर्थात् वाक् तत्त्व ही द्यौ है अर्थात् यह अग्नि वाक् तत्त्व, छन्द रश्मियों व प्राण रश्मियों में रहता है। इसलिए महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा कि 'प्राणो वै द्यौः' अर्थात् प्राण ही द्युलोक है। 'आपो वै द्यौः' यह अग्नि कण एवं तन्मात्राओं के अन्दर भी रहता है। कण के बिना किसी भी प्रकार का आवेश नहीं रह सकता। इसका आधार ही कण है। कल्पना करें कि इस ब्रह्माण्ड में कोई भी कण वा रश्मि नहीं है, तब विद्युत् आवेश की बात करने का कोई अर्थ नहीं है। **महर्षि याज्ञवल्क्य** ने लिखा है- 'द्यौरेवात्मा' अर्थात् वह आत्मा में रहता है। देव सूत्रात्मा वायु में रहता है। यहाँ हम आत्मा शब्द से परमात्मा का ग्रहण नहीं करेंगे, क्योंकि वह आध्यात्मिक अर्थ में आ जाएगा।

अग्नि इसलिए भी देव है, क्योंकि अग्नि छन्द व प्राण रश्मियों, कणों, सूत्रात्मा वायु और इन्द्र में भी रहता है। 'इन्द्र' किसको कहते हैं ? विद्युत् को। इसका तात्पर्य है कि अग्नि विद्युत् में रहता है। जहाँ भी विद्युत् है, वहाँ अग्नि है। अगर विद्युत् आवेश नहीं हो, तब भी ऊष्मा का उत्पन्न होना असम्भव है। जिसको हम आवेशरहित कहते हैं, जैसे- न्यूट्रॉन, यदि वह कम्पन करने लग जाए या बहुत सारे न्यूट्रॉन हों, उनमें कम्पन उत्पन्न हो जाए, तो तापमान में वृद्धि हो जाएगी। तो क्या बिना आवेश के तापमान में वृद्धि हो गयी ? नहीं, न्यूट्रॉन में भी आवेश होता है। यदि न्यूट्रॉन में आवेश नहीं होता, तो वह किसी प्रोटोन के साथ मिल ही नहीं सकता था। न्यूट्रॉन में क्वार्क हैं, उनका कुल आवेश शून्य है, यह ठीक है, लेकिन जिस ओर धनात्मक क्वार्क होगा, उस दिशा में वह धनात्मक की तरह व्यवहार करेगा और जिस ओर ऋणात्मक क्वार्क होगा, उस ओर से वह ऋणात्मक की तरह व्यवहार करेगा। यदि क्वार्क में आवेश नहीं होता, तो सर्वथा न्यूट्रॉन आवेशरहित होता और न्यूट्रॉन, प्रोटोन नाभिक में रह ही नहीं सकते थे।

ऐसा माना जाता है कि फोटोन्स में आवेश नहीं होता, लेकिन उसमें बल होता है और ऊष्मा होती है, परन्तु यह सही नहीं है। फोटोन्स में भी

आवेश होता है। आवेश की परिभाषा विज्ञान के द्वारा अभी तक ठीक-2 नहीं जानी गई। जो किसी प्रकार के आकर्षण या प्रतिकर्षण बल का अनुभव कराता है, उसको आवेश कहते हैं। आवेश का कारण रश्मियाँ हैं। ऋणात्मक आवेश में मरुद् रश्मियाँ अधिक होती हैं और धनात्मक आवेश में प्राण रश्मियाँ अधिक होती हैं। स्पेस/आकाश में भी चार्ज होता है। मैं इसकी चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। वैदिक भौतिकी बहुत गम्भीर विषय है, जिसका पूरा स्पष्टीकरण अनायास नहीं होना चाहिए। यहाँ देव की व्याख्या समाप्त होती है। इस प्रकार अग्नि देव भी है।

3. ऋत्विजम्- अब अग्नि का एक और विशेषण है- 'ऋत्विजम्'। ऋत्विक् क्या है? निरुक्तकार कहते हैं- 'ऋत्विक् कस्मात्। ईरणः। ऋग्यष्टा भवतीति शाकपूणिः। ऋतुयाजी भवतीति वा' अर्थात् यह देव है। कौन-2 से देव है? छह पदार्थ देव हैं। अग्नि के छह अर्थ बताए थे— मन, वाक्, प्राण, सूत्रात्मा वायु, ऊष्मा और विद्युत्, ये सभी देव हैं। जब अग्नि का अर्थ प्राण है, तो यह प्राण द्यौ में रहता है, वहाँ हमें प्रसंग के अनुसार अर्थ लेना है।

ऋत्विक् का अर्थ होता है कि जो पदार्थ अग्रिम चरण के पदार्थों को प्रेरित करने वाले हैं और सूक्ष्म व स्थूल सभी प्रकार के पदार्थों का यजन करने वाले हैं, वे ऋत्विक् कहलाते हैं। मन, वाक्, प्राण, सूत्रात्मा वायु, ऊष्मा और विद्युत् ये छहों पदार्थ सभी पदार्थों और स्पष्ट करें तो, ये अपने स्थूल पदार्थों का यजन करने वाले हैं अर्थात् उनका संयोग और वियोग करने वाले हैं अर्थात् उनको जोड़ते भी हैं और उनको अलग भी करते हैं। ये एक चक्र के अनुसार और एक नियम से काम करते हैं। जैसे पृथ्वी अपने चक्र में घूम रही है, चाहे वह अपने अक्ष के चारों ओर घूम रही हो अथवा सूर्य के चारों ओर घूम रही हो, उसका एक नियम है। उसमें अन्तर नहीं आता, यदि कोई अन्तर होगा भी तो नियमानुसार ही होगा। वैसे ही ये सभी छहों पदार्थ भी नियम के अनुसार ही काम करते हैं, यदृच्छया/रेंडमली कुछ नहीं हो रहा। जिसको हम नहीं

जानते, उसे रेंडम कह देते हैं, जैसे अनिश्चितता का सिद्धान्त।

आज हमने अग्नि के तीन विशेषणों की व्याख्या की। अब अगले दो विशेषणों की व्याख्या हम कल करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

7. वेद के प्रथम मन्त्र में सृष्टि का सार

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! कल हम अग्नि के विभिन्न विशेषणों की चर्चा कर रहे थे और यह भी बता रहे थे कि इस मन्त्र में अग्नि पद जिन छः पदार्थों के लिए प्रयुक्त हुआ है, उसके वे विशेषण किस प्रकार से है?

4. होतारम् - अगला विशेषण आता है- होतारम्। होता किसको कहते हैं? 'होतारो ह्वातारम्', कौषीतकी ब्राह्मण में लिखा है- 'आत्मा वै होता', 'वाग्वै होता'। **महर्षि तित्तिर** ने तैत्तिरीय ब्राह्मण में लिखा है- 'मनो होता'। महर्षि ऐतरेय महीदास ने लिखा है- 'प्राणो वै होता' और 'क्षत्रं वै होता'। इसका अर्थ है कि ये सभी पदार्थ होता हैं। किसी को अपनी ओर आकर्षित करने वाला, बुलाने वाला अथवा खींचने वाला होता कहलाता है। वाक्, मन, प्राण, सूत्रात्मा वायु, ऊष्मा और अग्नि इन सभी की उपस्थिति में ही आकर्षण और संयोजन की क्रियाएँ होती हैं। इसलिये ये सभी 'होता' कहलाते हैं। कल्पना करें कि सूर्य के नाभिक में अगर बहुत अधिक तापमान न हो, तो वहाँ नाभिकीय संलयन की क्रिया होगी ही नहीं। ये होता आकर्षक भी हैं और भेदक भी।

जब सृष्टि में संयोग की क्रियाएँ होती हैं, तो आकर्षण बल काम करता है। इसके साथ प्रतिकर्षण बल भी काम करता है और भेदक अर्थात् तोड़-फोड़ करने वाले बल भी काम करते हैं। मान लीजिए दो अणु हैं, उन दोनों में कोई रासायनिक क्रिया होगी, उसमें किसी एक अणु के साथ दूसरा जुड़ेगा। मान लीजिए उनमें से किसी अणु में कोई इलेक्ट्रॉन आएगा अथवा जाएगा, तो पहले विखण्डन की क्रिया ही होगी, संयोग और वियोग की प्रक्रिया होगी।

अगर सोडियम के एटम और क्लोरीन के एटम में से इलेक्ट्रॉन का आवागमन न हो, तो सोडियम क्लोराइड बन ही नहीं सकता। एक में से इलेक्ट्रॉन निकलेगा और एक में जुड़ेगा, तो वहाँ संयोग की क्रिया होगी और भेदन की क्रिया भी होगी। इस प्रकार ये सब करने वाले कहलाते हैं- **होता।** अग्नि नामक छः पदार्थ हैं, वे यह काम भी करते हैं। इसलिए यहाँ अग्नि को भी होता कहा गया है। वाक्, मन, प्राण, विद्युत्, सूत्रात्मा वायु आदि सब 'होता' हैं।

5. रत्नधातमम् - रत्नधातम अर्थात् जो रत्नों को धारण करने वालों में सबसे श्रेष्ठ है। रत्नधा का अर्थ है- रत्नों को धारण करने वाला। रत्नधातम का अर्थ है- रत्नों को धारण करने वाले जितने भी पदार्थ हैं, उन सबमें सबसे अच्छा। अब रत्न किसको कहते हैं? ऋषि दयानन्द लिखते हैं- 'रमयति हर्षयतीति रत्नम्' और महर्षि यास्क कहते हैं- 'रत्नं धननाम' अर्थात् सभी सूक्ष्म पदार्थ, जो किसी के द्वारा धारण किए जाते हैं, वे रत्न कहलाते हैं। जो इस संसार में नाना प्रकार की क्रियाएँ करते हैं, वे रत्न कहलाते हैं और उनको धारण करने वाले बहुत से पदार्थ हैं, उनमें से अग्नि श्रेष्ठ और सबसे उत्कृष्ट कोटि का पदार्थ है। इसलिए उसको कहा है- रत्नधातम।

ये जो पाँच विशेषण बताए गए हैं, ये वायु, मन, वाक्, प्राण, विद्युत्, सूत्रात्मा वायु और ऊष्मा के भी हैं।

अब आगे अन्तिम क्रियावाची पद आता है - **ईळे** । इसका अर्थ है- 'स्तुवे याचे अधीच्छामि प्रेरयानि वा।' मैं ऐसे अग्नि, जो उपर्युक्त विशेषणों से विभूषित होता है, को प्रकाशित करता हूँ। उनको आकर्षित करने की बार-2 इच्छा करता हूँ। अब लोग कहेंगे कि यह परमात्मा कह रहा है? नहीं, यह छन्द रश्मि जिसके द्वारा उत्पन्न होती है, वह मधुच्छन्दा रश्मि कह रही है कि मैं अग्नि को इन विशेषणों से युक्त करती हूँ अर्थात् वह छन्द रश्मि अग्नि को

इन विशेषणों से युक्त करती है। अग्नि को प्रकाशित करती है अर्थात् इन पदार्थों को बार-2 आकर्षित करती है। अग्नि नाम के छः पदार्थ समस्त सृष्टि में हैं। ऐसा नहीं है कि अग्नि शब्द इसी मन्त्र में है, यह शब्द बहुत सारे मन्त्रों में है। वेद में सबसे ज्यादा अग्नि शब्द ही आया है। तो यह रश्मि क्या करती है, जिसने इस छन्द रश्मि को उत्पन्न किया?

'अग्निमीळे पुरोहितं...' यह जो छन्द रश्मि है, यह मधुच्छन्दा रश्मि से उत्पन्न हुई है। वह मधुच्छन्दा रश्मि इस रश्मि के द्वारा इन सभी छः पदार्थों को बार-2 आकर्षित करती है और प्रकाशित भी करती है। आप कहेंगे कि मन तो मधुच्छन्दा ऋषि रश्मि से सूक्ष्म है, वाक् रश्मि (ओम्) वह भी मधुच्छन्दा रश्मि से सूक्ष्म है, तो क्या स्थूल भी सूक्ष्म को आकर्षित करता है। हाँ, ऐसा भी होता है। पिता पुत्र को आकर्षित करता है और पुत्र भी पिता को आकर्षित करता है। कहीं पिता पुत्र को ढूँढता है और कहीं पुत्र पिता को ढूँढता है।

जहाँ यह छन्द रश्मि होती है, उस स्थान पर जो मनस्तत्त्व होता है, वह भी इन गुणों से अधिक युक्त हो जाता है। जहाँ भी इन गुणों से युक्त वाक् रश्मि होती है, वहाँ अनेक क्रियाएँ करती है, लेकिन इस छन्द रश्मि के निकट जो वाक् रश्मि, 'ओम्' रश्मियाँ होती हैं, वह अधिक सक्रिय होती हैं और अधिक मात्रा में स्पन्दित होती हैं। जैसे कोई एक ध्वनि उत्पन्न करे और दूसरी ओर भी समान बल से वही ध्वनि उत्पन्न करे, तो इसकी शक्ति बढ़ जाएगी। रस्सी पत्थर को घिस नहीं सकती, लेकिन वही रस्सी बार-2 पत्थर पर घिसी जाती है, तो पत्थर पर निशान बन जाता है। 'ओम्' रश्मि का अधिक सक्रिय होने का तात्पर्य क्या है? वास्तव में 'ओम्' रश्मि अधिक सक्रिय या कम सक्रिय नहीं होती, लेकिन उसकी आवृत्ति बढ़ जाती है, वह अधिक बार उत्पन्न हो जाती है अर्थात् उसकी संख्या बढ़ जाती है, इसलिए उसके प्रभाव बढ़ जाते हैं।

अब आप कुरान और बाइबिल या किसी भी अन्य धर्म ग्रन्थ के पहले एक-दो वाक्यों को लेकर सोचें कि उन वाक्यों का क्या अर्थ होता है ? अभी हमने वैज्ञानिक अर्थ बताया है, इसको वैज्ञानिक अर्थ न कह कर आधिदैविक अर्थात् पदार्थ विज्ञान का अर्थ कहेंगे।

भावार्थ- सम्पूर्ण सृष्टि, जिसको हम देख सकते हैं, देखते हैं अथवा नहीं भी देखते हैं। वस्तुतः हम सृष्टि के कुछ भाग को ही देखते हैं, शेष को हम नहीं देख सकते। इस सम्पूर्ण सृष्टि में जो भी पदार्थ है, वह सूक्ष्म घटकों से मिलकर बना है। इसलिए यह सृष्टि एक हवन कुण्ड है, इसमें निरन्तर परमात्मा यज्ञ कर रहा है। विभिन्न रश्मियों, कणों, तरंगों, प्राण रश्मियों आदि की आहुति डाल रहा है और उन्हीं आहुतियों के परिणामस्वरूप हमारे शरीर बने, वनस्पतियाँ बनीं, विभिन्न लोक-लोकान्तर बने और उसी यज्ञ का मुख्य घटक, जो सबसे पहले बना, वह है- अग्नि। अग्नि, जो छः रूपों में माना जा सकता है- मन, 'ओम्' रश्मि, सूत्रात्मा वायु रश्मि, प्राण रश्मि, विद्युत् और ऊष्मा। इन सबसे सृष्टि में आठ गुण उत्पन्न होते हैं, जो इस प्रकार हैं-

रूप- सृष्टि में आकार बनने लगते हैं अर्थात् सृष्टि में अर्थात् पदार्थ में संघनन प्रक्रिया शुरू होने लगती है। **दाह**- इस सृष्टि में ऊष्मा उत्पन्न होने लगती है। सृष्टि में अर्थात् जो पदार्थ सृष्टि का मूल उपादान कारण है, उसमें धीरे-2 ऊष्मा उत्पन्न होने लगती है। **वेग**- अग्नि सदैव गतिशील रहता है। **प्रकाश**- फोटोन बनने लगते हैं। कुछ पदार्थ जो हमें दिखते अथवा नहीं दिखते, दोनों प्रकार के उत्पन्न होने लगते हैं। वे इस सृष्टि में रश्मियाँ, कण वा तरंग बनकर गति करने लग जाते हैं। **छेदन**- इस सृष्टि में कण एक-दूसरे से टकराकर किसी वस्तु को छेदते वा भेदते हैं अर्थात् तोड़-फोड़ भी साथ में चलती रहती है। **धारण**- एक कण दूसरे कण को आकर्षित करता है और आकर्षित करके धारण भी कर लेता है। केवल आकर्षण करके छोड़ दे, तो वैसा ही हो जाएगा, जैसे कोई वॉलीबॉल का खिलाड़ी बॉल को एक से दूसरे

की तरफ फेंक तो दे, लेकिन दूसरा पकड़ कर फिर फेंके नहीं। कभी कोई दूसरी परिस्थिति बनती है, तो एक कण किसी एक से छूटता है, तो दूसरी क्रिया के लिए उसे कोई अन्य कण पकड़ लेता है। साथ ही **आकर्षण** और **प्रतिकर्षण**, ये आठ गुण इस पदार्थ में उत्पन्न होने लगते हैं और ये सभी अग्नि के छः रूपों से आठ गुणों को उत्पन्न करने में अपने-अपने स्तर पर भूमिका निभाते हैं और ये छः पदार्थ जिस पदार्थ में हैं, जैसे किसी कण, फोटोन अथवा किसी छन्द रश्मि में हैं, तो उसमें ये सारे गुण उत्पन्न हो जायेंगे।

सृष्टि में कोई क्रिया होती है, तो जब-2 उसमें आकर्षण बल की आवश्यकता होगी, आकर्षण होने लगेगा। छेदन-भेदन की आवश्यकता होगी, तो छेदन-भेदन होने लगेगा। प्रतिकर्षण की आवश्यकता होगी, तो प्रतिकर्षण होने लगेगा। गति की आवश्यकता होगी, तो गति होने लगेगी। विराम अवस्था की आवश्यकता होगी, तो विराम होने लगेगा। ऊष्मा की आवश्यकता होगी, तो ऊष्मा कम या अधिक होने लग जायेगी। इस प्रकार जो अग्नि के छः रूप है, वे ही इसके लिए उत्तरदायी हैं। इनके कारण अग्नि को विभिन्न पदार्थ धारण करते हैं। क्वार्क, प्रोटोन-न्यूट्रॉन आदि कण और विभिन्न मीडियेटर कण, ये सभी जो अग्नि को धारण करते हैं, इनमें भी अग्नि के गुण आ जायेंगे। इस प्रकार सम्पूर्ण सृष्टि इस अग्नि का ही खेल है। इस मन्त्र में अग्नि को मुख्य घटक में से एक घटक बताया है। मधुच्छन्दा रश्मि उस अग्नि को समृद्ध करती है और उसे उत्पन्न भी करती है। वह मन आदि को उत्पन्न नहीं करती, लेकिन उनको आकर्षित करती है और कहीं-कहीं उन्हें समृद्ध कर देती है। जो विद्युत्, ऊष्मा आदि हैं, मधुच्छन्दा रश्मि उनको उत्पन्न भी करती है।

विवेकशील व मननशील प्राणी, जिसको हम यहाँ मनुष्य कहते हैं, वह ब्रह्माण्ड में कहीं भी युवावस्था में जन्मा और उसने देखा कि मेरा शरीर क्या है? यह सूर्य दिखाई दे रहा है, यह क्या है? तारे-चन्द्रमा क्या हैं? पृथिवी क्या है? वनस्पतियाँ क्या हैं? सागर क्या है? उसको कौन बताता है? कोई

गाय, भैंस, शेर, चीते आदि तो बता नहीं सकते और वे मनुष्य स्वयं सभी एक जैसे थे, जो उस समय उत्पन्न हुए थे। अगर स्वयं ज्ञान हो जाता, तो बहुत सारे वनवासी बिना किसी से पढ़े वैज्ञानिक बन गये होते। किसी कॉलेज या रिसर्च सेन्टर की आवश्यकता ही नहीं होती। विकासवादी सोच इस बात पर आधारित है कि उनके लिए किसी स्कूल-कॉलेज की आवश्यकता ही नहीं है, वे तो वैसे ही विकसित हो जायेंगे, क्योंकि विकास तो होता ही है।

इन विकासवादियों ने इतना भी नहीं सोचा कि वर्षा ऋतु में एक दीपक जला दें, तो बहुत सारे कीड़े आकर जलकर मर जाते हैं और कब से ऐसा हो रहा है ? जब से सृष्टि बनी है। सृष्टि बनी तब से लेकर अब तक कीड़े-मकोड़ों में ज्ञान का इतना विकास नहीं हुआ कि वे दीपक के पास जायेंगे, तो जल कर मर जायेंगे और हम में इतना विकास हो गया कि चन्द्रयान बना रहे हैं, मंगलयान बना रहे हैं। इनके अनुसार तो हम भी उन पतंगों जैसे ही थे। यह कितनी मूर्खतापूर्ण बात है।

प्रश्न- वेद में एक निश्चित संख्या में मन्त्र हैं, तो आपने वेद में अनन्त ज्ञान कैसे कहा ?

उत्तर- मैंने अनन्त नहीं कहा। कभी भगवान् इन्द्र ने महर्षि भरद्वाज से कहा था- 'अनन्ता वै वेदा:'। मैं ऋषियों व देवों में विश्वास करने वाला और श्रद्धा रखने वाला हूँ, लेकिन अनन्त श्रद्धा रखने वाला नहीं हूँ। मैं सोचता हूँ कि ऋषियों और महापुरुषों के विचारों का बिना सोचे समझे खण्डन करना मूर्खता व कृतघ्नता है। मैंने इस मन्त्र का इतना विस्तृत अर्थ किया। इसकी व्याख्या और भी हो सकती है। आगे आधिभौतिक अर्थ भी होगा कि लोकव्यवहार में इस मन्त्र की क्या उपयोगिता है ? जो अग्नि का आधिदैविक अर्थ किया, उससे भी हम अग्नि के बहुत सारे गुणों को जानकर लाभ उठा सकते हैं। इससे बहुत सारी टेक्नोलॉजी भी बना सकते हैं। ऊष्मा, विद्युत्, प्राण रश्मियों का हम

कितना उपयोग कर सकते हैं, यह हमारे ऊपर है।

इसलिए चारों वेदों में जो मन्त्र हैं, वेद मात्र उतना ही नहीं है। मन्त्र इस अनन्त ब्रह्माण्ड में भरे हुए हैं। कुछ मन्त्र वेदों में नहीं हैं, लेकिन ब्रह्माण्ड में हैं और गायत्री मन्त्र वेद में चार बार है, लेकिन ब्रह्माण्ड में अनेक बार है। इसलिए कहा 'अनन्ता वै वेदाः' अर्थात् वैदिक छन्द इस ब्रह्माण्ड में अनन्त हैं, इनकी कोई संख्या नहीं है। ज्ञान की दृष्टि से हम जितना पढ़ेंगे, जितना उसमें प्रवेश करेंगे और अर्थ भी निकल जायेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

8. परमात्मा का प्रथम व्यावहारिक उपदेश

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! जैसा कि हम चर्चा कर रहे थे कि यह चारों वेदों का प्रथम मन्त्र है। सबसे पहले ईश्वर हमें क्या बताना चाहेगा? पहले यह बताना चाहेगा कि यह सृष्टि क्या है, जिसमें मैंने आपको भेजा है। जब तक हम यह नहीं जानेंगे, तब तक इसका उपयोग भी नहीं कर सकते।

आधिभौतिक अर्थ – इसमें हम दो तरह की चर्चा करेंगे। एक तो यह कि हम जड़ पदार्थों को कैसे उपयोग में ले सकते हैं और दूसरा यह कि हम भूत अर्थात् प्राणियों से क्या उपयोग ले सकते हैं या संसार में कैसे व्यवहार कर सकते हैं। हमारा व्यवहार दो प्रकार का होता है। एक व्यवहार यह कि हम सूर्य, अग्नि, वायु व जल का कैसे उपयोग करें? यह एक प्रकार से विज्ञान का ही भाग है। एक बार जब सृष्टि विज्ञान को समझ लेंगे, तो इसका उपयोग कैसे करना है, यह भी आ जायेगा। हमने समझ लिया कि कोई मोटरसाइकिल कैसे बनी? उसके क्या-2 अंग, क्या-2 पुर्जे हैं, यह एक विषय हुआ। दूसरा विषय हुआ कि उसे कैसे चलाना है, कैसे उपयोग करना है, वह कैसे बनी? यह विज्ञान व तकनीक का विषय है, लेकिन कैसे उपयोग करें, इसे हर व्यक्ति को सीखना है।

जो मनुष्य की पहली पीढ़ी थी, उसे इतनी तो जानकारी थी कि उसे क्या खाना, क्या नहीं खाना और कैसे रहना है? उसे सन्तति उत्पादन, अपना भोजन, अपनी रक्षा आदि सबकी जानकारी थी। वस्तुतः स्वाभाविक ज्ञान पशु-पक्षियों में हम से अधिक होता है, लेकिन जो मनुष्य की पहली पीढ़ी होती है, उसमें स्वाभाविक ज्ञान बहुत होता है। अगर बहुत ज्ञान नहीं होता,

तो वे अपनी रक्षा भी नहीं कर पाते। मनुष्य से पहले शेर, चीते आदि हिंसक जानवर बन चुके थे, वे सब उनको खा जाते। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि मनुष्य युवावस्था में उत्पन्न हुआ। इसके बारे में कोई जानना चाहता है, तो हमारी वेबसाईट vaidicphysics.org पर हमारा एक लेख है– 'विकासवाद का वैदिक सिद्धान्त'। मनुष्य कैसे युवावस्था में पृथिवी से उत्पन्न होता है, उसमें आप पढ़ सकते हैं।

यहाँ मन्त्र का अर्थ है कि इस प्रकार की अग्नि की स्तुति करता हूँ, उसको जानता हूँ, उसको जानना चाहता हूँ अथवा उसे जानो और उसकी खोज करो। सबसे पहले ऊष्मा और विद्युत् वैज्ञानिक पक्ष में आयेंगे। जब भी मनुष्य ने आग जलाने का आविष्कार किया, तो यह उस समय का बहुत बड़ा आविष्कार था। आज लोग सोचते हैं कि यह कोई आविष्कार नहीं है। लेकिन जरा सोचिए कि किसी ने आग को देखा तक नहीं हो, क्योंकि वह पहली पीढ़ी थी, तो आग जलाना भी एक बहुत बड़ा आविष्कार था। मेरे इस कथन से कोई यह न समझे कि मैं भी पाश्चात्य विद्वानों की भाँति प्रारम्भिक मानव को मूर्ख मान रहा हूँ। नहीं, वह मूर्ख नहीं, बल्कि वर्तमान मनुष्य की अपेक्षा अत्यधिक प्रज्ञावान् था, परन्तु फिर भी उसने तकनीक को क्रमशः ही विकसित किया। इसका अर्थ यह नहीं कि इसमें हजारों वर्ष लग गये। आवश्यकतानुसार वह अपनी वैदिक महती विद्या के बल पर धीरे–धीरे आविष्कार करता गया। विद्युत् का उत्पादन और उपयोग करना भी एक बहुत बड़ा आविष्कार था। अब विद्युत् का उपयोग कहाँ–2 हो?

ऋषि दयानन्द ने अपने भाष्य में कई जगह संकेत किए हैं कि आकाशीय विद्युत् का उपयोग करो। सूर्य की किरणों से विद्युत् बनाकर उसका उपयोग करो। इस प्रकार जब सृष्टि को जान लिया जाएगा कि यह सृष्टि है, यह मन है, यह प्राण है, यह ऊष्मा है, यह वाक् है, तब वह उनका निर्माण भी कर लेगा। अग्नि की उत्पत्ति की बात करके उस मनुष्य को कहा जा रहा है कि

तुम अग्नि की खोज करो, विद्युत् की खोज करो, उसको उपयोग में लाओ। यह संसार का सबसे पहला आविष्कार है। उससे पहले के आविष्कार में कोई खोज की आवश्यकता नहीं थी, वे उसे जानते ही थे।

वह युवा मनुष्य सृष्टि में आकर क्या देखेगा? जब मनुष्य युवावस्था में धरती से निकला तो उसे भूख लगी होगी, उसके चारों ओर फल थे। सबसे पहले जो मनुष्य आये, वे फलाहारी थे। जो लोग आज यह कहते हैं कि पहले मनुष्य मांसाहारी था, पत्थर से मारकर के खाता था। यह विचार उन लोगों की देन है, जो स्वयं मांसाहारी हैं। मेरे उनसे प्रश्न हैं- मनुष्य ने पशुओं से मांस खाना सीख लिया, तो गाय से घास खाना क्यों नहीं सीखा? गाय और हिंसक जानवरों से उनकी तरह चलना क्यों नहीं सीखा? वास्तव में वे प्रथम पीढ़ी के मनुष्य विकसित थे, उनकी बुद्धि इतनी विकसित थी कि उन्हें यह ज्ञान था कि उन्हें क्या खाना चाहिए और क्या नहीं। सबसे पहले उन्हें फल ही दिखाई दिये, इसलिए उन्होंने फलों का आहार प्रारम्भ किया। इसके लिए खोज की बहुत आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि सम्पूर्ण सृष्टि में वन, वनस्पति, फल, शाक आदि थे। इस कारण वह फलाहारी था। इसके बाद मानव दुग्धाहारी हुआ और जब उसने पशुओं को पालना शुरू किया।

परमात्मा पहले मन्त्र में उपदेश दे रहा है कि यह फल आदि खाकर के आगे बढ़ो अग्नि का उपयोग करो और विद्युत् का उत्पादन करो। कोई विज्ञान जानने वाला व्यक्ति कह देगा कि विद्युत् का उत्पादन तो वर्तमान विज्ञान ने किया। वस्तुत: यह बौद्धिक दासता है और इसकी जड़ें बहुत गहरी हैं। वे यह नहीं सोचते कि हमारा देश कितना महान् था। इसके लिए मैं ऐसे बौद्धिक दासों को एक पुस्तक पढ़ने की सलाह दूँगा- क्रान्तिकारी आर्य नेता लाला लाजपत राय की पुस्तक 'दु:खी भारत' और यह पुस्तक, अमेरिका की एक पत्रकार मिस मैरी द्वारा लिखी 'मदर इण्डिया' पुस्तक के उत्तर में लिखी गई है। नाम देखने से ऐसा लगता है कि वह महिला भारत की बड़ी भक्त थी,

परन्तु उसने इसमें भारत को भूखा, नंगा और अनेक बुराईयों व अज्ञानता से भरा देश सिद्ध किया है। उसका उत्तर लाला लाजपतराय ने 'दुःखी भारत' नामक पुस्तक से दिया, जो दो खण्डों में है। उसमें पढ़ के देखिए कि इंग्लैण्ड और अमेरिका कितने पिछड़े थे, यूरोप के देश कितने पिछड़े थे और उस समय भारत की क्या स्थिति थी?

एक बार लन्दन से एक इंजीनियर का मेरे पास फोन आया, तो उसने पहले बहुत सारे प्रश्न किए फिर मैंने उसे समझाया, तो वह हमारी बातों से सहमत हो गया। उसने कहा कि आचार्य जी! आप ऐसे डर्टी इण्डिया में कैसे रह रहे हैं? वह भारतीय है, इंग्लैण्ड में रहता है और भारत को डर्टी इण्डिया बोलता है। मैंने उस युवक से कहा कि इंग्लैण्ड कब से विकसित हो गया? यहाँ का धन लूट के वहाँ ले गया, वह बहुत गरीब देश था। लाला लाजपतराय की पुस्तक को पढ़ के देखो, वहाँ की क्या स्थिति थी, उन्होंने प्रमाण सहित लिखा है। वहाँ कैसी दासप्रथा थी और कैसी गरीबी थी।

मैंने कहा कि इंग्लैण्ड धनवान् है, यह ज्ञान कब से हुआ? मैंने कहा कि यह वही यूरोप है, जिसके धर्म गुरुओं ने गेलीलियो को सजा सुनाई थी। यह वही यूरोप है, जिसने सन् 1602 में ब्रूनो को चौराहे पर जिन्दा जला दिया था, जिसने यही कहा था कि पृथिवी घूमती है, सूर्य नहीं। भारत में सदैव वैज्ञानिकों का आदर किया जाता रहा है और भारत में ऋषि-मुनियों का राजाओं से बड़ा स्थान रहा है। मध्यकालीन राजा लोग भी ज्योतिषियों, कवियों, साहित्यकारों को पुरस्कृत किया करते थे और वहाँ इंग्लैण्ड में सत्य बोलने और विज्ञान की खोज करने पर फाँसी दिया करते थे। हाँ, यह दुर्भाग्य अवश्य है कि आज भारत में वैदिक विज्ञान का कोई सम्मान नहीं है, विशेषकर ऐसे वैदिक वैज्ञानिकों का, जो पाश्चात्य विज्ञान से आगे की बात करते हैं। इसका मैं स्वयं भुक्तभोगी हूँ।

हाँ, यह बात सत्य है कि हमारा देश विद्युत् विद्या, विमान विद्या और शिल्प विद्या आदि में अत्यन्त विकसित था, कभी पुराने भवनों को जाकर देखिए। यहाँ जालोर जिले में एक 800 वर्ष पुराना किला है, जिसे तत्कालीन राजा वीरमदेव सोनगरा ने बनवाया था। उसकी एक दीवार पर चूने से प्लास्टर किया गया था, जो आज भी काँच की तरह चमकता है। कैसा चूना था और किस तरह से प्लास्टर किया गया था? आज दुनिया की कौनसी ईमारत है, जिसका 100 वर्ष बाद भी प्लास्टर रह पाएगा? ऐसी कोई भी ईमारत नहीं होगी, लेकिन यहाँ हजार-हजार वर्ष पुराने किले खड़े हैं। महरौली का लगभग 1600 वर्ष पुराना जो लोहे का स्तम्भ है, वह किस धातु का बना है, जिस पर जंग नहीं लगता। ऐसा था भारत और यह तो मध्यकालीन बात है। इसलिए ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि पहले के लोग विद्युत् नहीं जानते थे, पहले केवल मांस खाते थे, ऐसा नहीं है।

यूरोप और अमेरिका वाले भी अपने आप को भूले हुए हैं। हम सभी ऋषियों की सन्तान हैं। यह बात आपके पूर्वज भी भूल गए और हमारे पूर्वज भी, लेकिन सबसे अधिक फिर भी हमारे पूर्वजों ने याद रखा और ऋषियों के नामों को सुरक्षित रखा, साहित्य को भी सुरक्षित रखा, लेकिन वे इसे न तो समझ पाए और न ही समझा पाए, यह अलग बात है। फिर भी उन्होंने साहित्य को आज तक सुरक्षित रखा। यूरोप के पुस्तकालयों में आज भी हमारा साहित्य है, जिसे वे यहाँ से ले गये थे। अमेरिकन विद्वान् डेविड हैचर चिल्ड्रैस की पुस्तक 'एण्टी ग्रेविटी' पढ़कर देखो, तो ज्ञात होगा कि भारत की विमान विद्या वर्तमान विकसित विमान विद्या से भी कितनी अधिक उन्नत थी।

यह बड़े शोक व आश्चर्य का विषय है कि कुछ निष्पक्ष विदेशी विद्वान् भारत के अतीत के वैज्ञानिक गौरव का गुणगान करते हैं और भारत के कथित प्रबुद्ध अपने ही देश की तथा वेद व ऋषियों की भरपेट निन्दा करते हैं। इसे पागलपन व नादानी के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? हाँ, यदि कुछ

कहा जा सकता है, तो केवल राष्ट्रद्रोह ही कहा जा सकता है। दुर्भाग्यवश ऐसे राष्ट्रद्रोही यहाँ बड़े-बड़े शिक्षण संस्थानों व मीडिया में भी खूब मिल जायेंगे। विद्युत् और ऊष्मा को खोजने का और उसका उपयोग करने का वर्णन वेद में है और विद्युत् और ऊष्मा दोनों ही पुरोहित का काम कैसे करते हैं, यह सब हम बता चुके हैं।

यज्ञ- महर्षि दयानन्द ने यज्ञ का अर्थ ऋग्वेद-भाष्य 4.34 में किया है- 'विद्याप्रज्ञाप्रर्वधकं अनेकविधव्यवहारम्' अर्थात् विद्या वा प्रज्ञा का वर्धन करने वाला व्यवहार भी यज्ञ कहलाता है। यज्ञ का अर्थ है- देवपूजा, संगतिकरण और दान अर्थात् हम विद्वानों का सम्मान करें। जो किसी भी विज्ञान को जानते हैं, उनका सम्मान करें। याद रखें कि जिस राष्ट्र वा समाज में विद्या का सम्मान नहीं होता, विद्वान् और वैज्ञानिक का सम्मान नहीं होता, वह समाज नष्ट हो जाता है।

आप लोग चाहे वैज्ञानिकों के भक्त हों या किसी और के, वास्तव में आप ज्ञान के ही भक्त हैं, मूर्ख का कोई भक्त नहीं होता। यह बात अलग है कि वे वैज्ञानिक आधा जानते हैं और आधा नहीं जानते, फिर भी वे ज्ञानी हैं, वे दिन-रात परिश्रम करते हैं, वे सम्मान के पात्र हैं और हमें इनका सम्मान करना चाहिए, यह भी एक यज्ञ है। लेकिन आप वेद का सम्मान नहीं कर रहे हैं, वैदिक वैज्ञानिक का सम्मान नहीं कर रहे हैं, यह आपकी अज्ञानता है। इसमें मैं आपका दोष भी नहीं कहूँगा, क्योंकि वेद के नाम पर जो मध्यकाल में होता रहा और आज भी हो रहा है, वह दुर्भाग्यपूर्ण है। जो वेद नहीं है, उसको वेद के नाम से प्रचारित किया जा रहा है। जैसा वेद है ही नहीं, वैसा वेद को बताया जा रहा है, तो इसमें वेद की निन्दा करने वालों का कोई दोष नहीं है। आज दोष इस बात का है कि हमारे मध्यकालीन पूर्वजों ने जो गलतियाँ की या जिस अज्ञानता में वे बहे, उसका परिणाम आज हम भोग रहे हैं।

जिस ग्रन्थ के आधार पर कुछ लोग निर्मम पशुओं की हत्या करते हैं, मनुष्य की बलि चढ़ाते हैं, छुआ-छूत करते हैं, नारी के साथ भी भेदभाव होता है, वह ग्रन्थ निश्चित ही अच्छा नहीं है और ऐसा वेद के नाम पर हुआ, ब्राह्मण ग्रन्थों, मनुस्मृति और अन्य ग्रन्थों के नाम पर हुआ। रामायण, महाभारत में भी मिलाया, किसको छोड़ा? इसलिए आलोचना करने वाले चाहे वामपंथी हों, ईसाई हों, मुस्लिम हों या अन्य कोई, उनको भी मैं इतना दोषी नहीं मानता, जितने दोषी वे हैं, जो इन ग्रन्थों को समझे बिना या गलत समझ कर प्रचार करते रहे और ये कहते रहे कि वेद हमारा हिन्दुओं का है, अन्यों का नहीं और दूसरों को अपना शत्रु बना लिया। ऋषि दयानन्द ने समझाया कि वेद सबके लिए है। किसी महिला ने एक प्रश्न किया है-

प्रश्न- क्या स्त्रियाँ ओम् का जप कर सकती है?

उत्तर- ओम् का जप, गायत्री मन्त्र का जप, वेद का पढ़ना और पढ़ाना, इन सब पर प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है। जैसे परमात्मा का दिया हुआ जल, हवा, आकाश, भूमि, सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश आदि सबके लिए है, वैसे ही वेद भी सबके लिए हैं। इसलिए मध्यकाल में जो हुआ, वह दुर्भाग्यपूर्ण और आपत्तिजनक था। इसके कारण ही वेद बदनाम हुआ और वेद के विरोध में अनेक मत-मतान्तर उत्पन्न हुए। इसलिए जिस समाज वा राष्ट्र में ज्ञान का विरोध होता है, ज्ञानी की पूजा नहीं होती, वह समाज अन्धकार में डूब जाता है अर्थात् नष्ट हो जाता है। मध्यकाल में यही हुआ, इसलिए भारत का पतन हुआ।

वह भारत, जो सारी दुनिया का आदर्श था, सारी दुनिया के ज्ञान-विज्ञान का केन्द्र था, सबका गुरु और मार्गदर्शक था, सबको नियन्त्रण में रखता था, वह स्वयं ही अविद्याग्रस्त हो जाये, वेद विद्याविहीन हो जाये, उसमें वेद के नाम पर, भगवान् मनु और ऋषि-मुनियों के नाम पर अत्याचार होने लग जायें, तो विश्व की स्थिति क्या होगी, क्या यह कल्पना की जा सकती है?

जब गुरु ही बिगड़ा हो, तो शिष्य क्या करेगा? जब राजा ही बिगड़ा हो, तो प्रजा क्या करेगी? इसलिए महिला अथवा पुरुष चाहे वह किसी भी देश का रहने वाला हो या किसी भी प्रकार की भाषा बोलता हो, किसी भी वर्ग वा मजहब का हो, सबको वेद पढ़ने का अधिकार है, अगर उसकी बुद्धि समझने और पढ़ने योग्य हो तो।

शोक इस बात का है कि भगवती उमा, अपाला, घोषा, लोपामुद्रा, अनुसूया, सीता, सावित्री, गार्गी, मैत्रेयी, कुन्ती जैसी महान् वेदविदुषियों के देश में सबकी जननी नारी जाति को ज्ञान-विज्ञान के अधिकार से वञ्चित करने का पाप किया गया। धन्य हो ऋषि दयानन्द, जिन्होंने इस पाप को धोने का प्राणपण से प्रयास किया और आर्य समाज ने इसे धोया भी। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

9. राजा या गुरु किसे बनायें?

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! कल हम इस मन्त्र के आधिभौतिक अर्थ की चर्चा कर रहे थे कि परमात्मा ने इस प्रथम मन्त्र में ही मनुष्य को सृष्टि का उपदेश करने के पश्चात् आग और विद्युत् के आविष्कार का उपदेश किया है। संसार भर में आज विकसित उसको माना जाता है, जिसके पास तकनीक हो और ऐसी कोई तकनीक नहीं है, जो बिना ऊष्मा अथवा विद्युत् के बन सके। वैदिक विज्ञान में जो विद्युत् का स्वरूप है, वह आधुनिक भौतिकी की अपेक्षा बहुत विस्तृत है। जैसे यदि उदाहरण के रूप में गुरुत्वाकर्षण बल को ही लें, वर्तमान विज्ञान इसे विद्युत् चुम्बकीय बल से अलग मानता है, लेकिन हमारे यहाँ गुरुत्व बल भी विद्युत् का ही एक रूप है और आधुनिक विज्ञान भी द्रव्यमान को 'गुरुत्वीय आवेश' शब्द देता है। धनात्मक और ऋणात्मक को इलेक्ट्रिक चार्ज कहता है, लेकिन मास/द्रव्यमान को ग्रेवीटेशनल चार्ज ही कहता है। इन दोनों का मूल एक है, इसलिए वैदिक भौतिकी में यह भी विद्युत् का रूप है।

इसलिए विद्युत् और ऊष्मा के आविष्कार का उपदेश परमात्मा ने इस पहले ही वाक्य में किया है और तभी से मनुष्य इस कार्य में लग गया, क्योंकि जिन चार ऋषियों को ज्ञान मिला, वे जानते थे कि इन सबका उपदेश, वर्णन, विस्तार और इन सबका विज्ञान वेदों में ही है। कितना कुछ ज्ञान-विज्ञान तो प्रथम मन्त्र में ही आ गया, जबकि यह संक्षेप में किया है और यदि सारे मन्त्रों को मिला लें, तो वेदों में कितना ज्ञान होगा यह आप स्वयं सोच सकते हैं। इसलिए कहते हैं- 'अनन्ता वै वेदाः'। यहाँ इस भाष्य में सृष्टि का सार भी आ गया और सृष्टि को उपयोग करने के लिए टेक्नोलॉजी का मूल उपदेश भी मिल गया अर्थात् संकेत मिल गया।

जीने के लिए अन्य व्यवहार- अग्नि का एक अर्थ होता है- आचार्य वा विद्वान्। जब चार ऋषियों को समाधि में ज्ञान हुआ, उस समय और भी जोड़े उत्पन्न हुए थे, उनको ज्ञान कौन देगा? तो यह मन्त्र कह रहा है कि हे मनुष्यो! आप ऐसे विद्वान् की खोज करो, जो पुरोहित रूप हो अर्थात् सदैव आपके सम्मुख रहकर, आपका हित करने का उपदेश करने वाला हो या करने में सक्षम हो। वह सदैव आपका हित करे और आपके लिए सदा सुलभ होवे। वह विद्वान् देवरूप होवे अर्थात् वह दिव्यज्ञान व अध्यात्म के प्रकाश से परिपूर्ण हो और सदैव ज्ञान देने की भावना रखने वाला हो और वह विद्वान् अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण कर चुका हो।

'विजिगीषा' अर्थात् जीतने की इच्छा, यह भी दिव् धातु का ही एक अर्थ है। ऐसा विद्वान् जो हर समय अपनी इन्द्रियों का विजेता होवे और सबको प्रसन्न करने वाला हो। ऐसा विद्वान्, जिसमें सभी जिज्ञासुओं को अपने ज्ञान से तृप्त करने का सामर्थ्य हो, जिसमें ज्ञान बाँटने की इच्छा सदैव हो और जो 'होतारूप' हो अर्थात् जिसने अपना जीवन समाज, राष्ट्र, विश्व व मानवता के लिए समर्पित कर दिया हो। ऐसा विद्वान् जो त्यागी हो, तपस्वी हो, रत्नों को धारण करने वाला हो अर्थात् ज्ञान-विज्ञानरूपी रत्न और सद्गुणों के रत्न जिसके अन्दर भरे हों। जो सृष्टि को जानने वाला और सृष्टि में रहने वाले सभी मनुष्यों को संगठित करके उनको वैज्ञानिक और योगी बनाने वाला हो, ऐसे विद्वान् की खोज करो।

पहला उपदेश है कि सृष्टि क्या है। दूसरा उपदेश है कि उससे कैसे उपयोग लेना है। अब ये करेंगे कैसे? इसके लिए कोई मार्गदर्शक चाहिए। ईश्वर ने मन्त्ररूप में ज्ञान दे दिया और मन्त्रों को समझाने के लिए उन चार ऋषियों को मन्त्रों से मन्त्रों का ज्ञान एवं अर्थ का ज्ञान भी ईश्वर ने दे दिया, लेकिन अन्य मनुष्यों को ज्ञान कौन देगा? इसलिए यह मन्त्र कह रहा है कि तुम ऐसे आचार्य, विद्वान्, वैज्ञानिक वा योगी की खोज करो, जिसमें ये गुण

हों, जो मैंने अभी बताये। ब्रह्मा जी ने उन चारों ऋषियों की खोज की और चारों ऋषियों (अग्नि, वायु, आदित्य, अङ्गिरा) ने, जिनके पास एक-एक वेद का ज्ञान था, उन्होंने ब्रह्मा जी को पढ़ाया। क्या उन्होंने किसी पुस्तक से पढ़ाया? नहीं, वेद उनकी स्मृति में था और ब्रह्मा जी ने वेद अपनी स्मृति में ग्रहण किया और उसे सुनकर दूसरों को सुनाया। अन्य ऋषियों ने किसको खोजा? ब्रह्मा जी को खोजा। मन्त्र कह रहा है कि ऐसे गुरु वा विद्वान् की खोज करो, जिसमें ये गुण हों, जो सृष्टि को जानता हो और जो सृष्टि के व्यवहारों को भी जानता हो। जो योगी, तपस्वी, वैज्ञानिक तथा जितेन्द्रिय हो, ऐसे गुरु की खोज करो। यह मन्त्र का आधिभौतिक में दूसरा सन्देश है।

अब उसके बाद क्या होता है? सारी जनता विद्वान् भी बन गई, अब क्या होगा? फिर अग्नि का अर्थ राजा भी होता है। इस मन्त्र में कहा कि ऐसे राजा की खोज करो अर्थात् ऐसा राजा बनाओ, जो अग्नि स्वरूप हो। विद्वान् को अग्नि कहते हैं, क्योंकि विद्वान् सबको अपने पीछे ले जाने वाला होता है। जैसे अग्नि सबके आगे चलता है, वैसे ही विद्वान् भी सबके आगे चलता है। योगेश्वर भगवान् कृष्ण जी महाराज ने गीता में कहा है- 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते' अर्थात् ज्ञान से बढ़कर पवित्र वस्तु इस संसार में कोई भी नहीं है। ब्रह्माण्ड में भी कोई नहीं है। ज्ञान ही सबसे पवित्र है। सम्पूर्ण सृष्टि ज्ञान से ही बनी है, ज्ञान से ही जानी जा सकती है, सम्पूर्ण सृष्टि का भोग भी ज्ञान से ही होता है और मोक्ष भी ज्ञान से ही होता है, इसीलिए कहा है- 'ज्ञानान्मुक्तिः'। ज्ञान से बढ़कर कोई सम्पदा नहीं है। इसलिए विद्वान् भी अग्नि है।

अग्नि का दूसरा अर्थ क्या होता है? 'अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते' अर्थात् जब समाज का संगठन करना होता है, तो सबसे पहले एक ज्ञानी की आवश्यकता होती है जो स्वयं सब समझ सके, समाज को समझा और समाज एक कर सके। राजा भी विद्वान् होना चाहिए, अगर राजा विद्वान् नहीं है, विद्वान् की

तरह जितेन्द्रिय नहीं है और अगर वह त्यागी-तपस्वी नहीं है, तो राष्ट्र नष्ट हो जाता है। आज संसार में बहुत सारे राजा हैं, राजा नहीं, लोकतन्त्र हैं, नेता हैं, परन्तु वे भी लौकिक ऐश्वर्य की दृष्टि से किसी राजा से कम नहीं हैं। आज के आई.ए.एस., आई.पी.एस. अधिकारी भी किसी राजा से कम नहीं हैं। मन्त्री उनसे और भी आगे हैं। ये लोग विद्वान् नहीं हैं, इन्हें सृष्टि का ज्ञान नहीं है और वेद का ज्ञान नहीं है। आपको यह भी बता दें कि सृष्टि का ज्ञान केवल वेद से ही हो सकता है।

सृष्टि को जानने की पद्धति में दूसरा स्थान आधुनिक विज्ञान का आता है। अन्य महजबी पुस्तकों से किसी को सृष्टि का ज्ञान नहीं हो सकता, मजहबी पुस्तकों से किसी को विज्ञान की अन्य शाखाओं का ज्ञान नहीं हो सकता। अन्य कोई भी मजहबी पुस्तक किसी तकनीक को भी नहीं बना सकती और अन्य मजहबी पुस्तक संसार में जीने का उचित मार्ग भी नहीं बता सकती, लेकिन वेद में सब है। इसलिए राजा वही होवे, जो वेद का विद्वान् हो, जो पूर्ण योगी हो, परमात्मा को भी जानने वाला हो और परमात्मा की बनाई हुई सृष्टि को भी जानने वाला हो। जो परमात्मा के द्वारा जीवात्माओं के लिए जो शरीर बनाए हैं, उन जीवात्माओं अर्थात् सभी प्राणियों को भी अपना ही मानने वाला हो।

यदि वह सृष्टि को जान लेगा, तो वह यह भी जान लेगा कि मेरे शरीर के साथ परमात्मा ने अन्य जीवों को भी शरीर दिया है। इसका अर्थ यह हुआ 'त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ' अर्थात् उसकी भावना यह हो कि वही माता है, वही पिता है और वही हमारा आचार्य-गुरु भी है। ऐसा मानने वाला ही राजा होना चाहिए। वह राजा जितेन्द्रिय हो, लम्पट नहीं होवे और राजा पुरोहित अर्थात् सबके लिए सुलभ होना चाहिए, सम्मुख प्रस्तुत होना चाहिए और सबका हितैषी होना चाहिए। अगर कोई राजा अहंकारपूर्वक किसी से नहीं मिलता है, दूसरों को छोटा समझता है, नादान, अनपढ़ व

अज्ञानी लोगों से घृणा करता है, तो वह राजा विद्वान् कहाने योग्य नहीं है। इसलिए वह राजा होने योग्य भी नहीं है। इसी प्रकार जो राजा अपनी प्रजा से दूरी रखता है, अपनी प्रजा से नहीं मिल अथवा मिलना नहीं चाहता और अपनी प्रजा का भला नहीं चाहता, उसे राजा होने का कोई अधिकार नहीं है। आज राजा तो दूर, किसी बड़े अधिकारी से मिलने के लिए भी एक सामान्य व्यक्ति कार्यालय में चक्कर लगाते-लगाते थक जाता है, लेकिन उसको मिलने का समय नहीं मिलता। मिलने का समय लेने के लिए भी किसी की सिफारिश लगानी पड़ती है। इसलिए ऐसे अधिकारी, नेता अथवा राजा को अपने पद पर बने रहने का कोई अधिकार नहीं है और न ही उसे अधिकारी बनने का अधिकार है।

आज राजा में और प्रजा में एक बहुत बड़ी दूरी है, बहुत बड़ा अन्तर है। लेकिन वेद कहता है कि राजा वही है, जो पुरोहित हो। राजा वही है, जो देव हो, जो अपने ज्ञान, विज्ञान और चरित्र के गुणों से अपने राष्ट्र को प्रकाशित करने वाला हो और वैसा ही ज्ञान-विज्ञान एवं चरित्र वह अपनी प्रजा को देने वाला भी हो।

भगवान् मनु ने मनुस्मृति में लिखा है कि राजा वही है, जिसमें पूर्ण ब्राह्मणत्व है अर्थात् जो चारों वेदों, शास्त्रों, वेदाङ्गों और उपाङ्गों का ज्ञाता है, वही राजा कहलाने योग्य है। मनुस्मृति में पढ़ें कि राजा कैसा होना चाहिए। मनुस्मृति में एक साधारण गृहस्थ को भी पूर्ण ब्रह्मचर्य धारण करते हुए कम से कम एक साङ्गोपाङ्ग वेद पढ़ना अनिवार्य बताया है। फिर राजा को तो बहुत बड़ा ज्ञानी होना चाहिए, उसमें ब्राह्मण व क्षत्रिय दोनों के गुण होने चाहिए और वह देने वाला अर्थात् सदैव त्याग की भावना रखने वाला होना चाहिए। राजा को चाहिए कि वह अपनी प्रजा को सन्तान के समान समझे। जैसे माता-पिता अपने सुख-दुःख भूलकर सन्तान के सुख-दुःख की चिन्ता करते हैं, स्वयं कष्ट सहन करके सन्तान को सुख देने का पूर्ण प्रयास करते हैं, वैसे ही

राजा वा राष्ट्राध्यक्ष को चाहिए कि वह अपने सुख-दुःख को भूलकर अपने देश की प्रजा के सुख-दुःख का ध्यान रखे, उनकी आर्थिक स्थिति का ध्यान रखे, उनकी कृषि व मजदूरी का ध्यान रखे, उनके स्वास्थ्य एवं शिक्षा का ध्यान रखे। उसके राष्ट्र में किसी भी प्रकार से प्रजा को कष्ट न होने पावे। जैसा भगवान् श्रीराम का राज्य था, महाराज अश्वपति का राज्य था और धर्मराज युधिष्ठिर का राज्य था। ऐसे और भी बहुत सारे राजा हुए।

आगे और बताया कि राजा कैसा होना चाहिए? होता। देने-लेने वाला अर्थात् वह त्यागी होना चाहिए, जो स्वयं अपनी हानि सहकर भी प्रजा के हित का ध्यान रखे। राजा रत्नों को धारण करने वाला हो अर्थात् उस राजा के राष्ट्र में धन-सम्पदा पर्याप्त मात्रा में हो। वह विदेशी मुद्रा पर जीने वाला न हो, वह विदेशों से ऋण व अनुदान की याचना करने वाला नहीं हो, बल्कि पूर्ण स्वाभिमानी व स्वावलम्बी राष्ट्र का निर्माता होना चाहिए। दुर्भाग्य से आज हमारा देश भिक्षुक बन गया है, जो सदा ऋण व अनुदान की भीख माँगता रहता है। उसका राष्ट्र ज्ञान की दृष्टि से समृद्ध होवे, धन की दृष्टि से समृद्ध होवे, अन्न की दृष्टि से समृद्ध होवे, शक्ति की दृष्टि से समृद्ध होवे और चरित्र की दृष्टि से समृद्ध होवे, ऐसा राजा होना चाहिए। इस प्रकार यहाँ उपदेश किया है- हे मनुष्यो! तुम ऐसे राजा की खोज करो अर्थात् ऐसा राजा बनाओ, जिनमें उपर्युक्त गुण हो।

प्रथम पीढ़ियों में राजा की कोई आवश्यकता नहीं थी। महर्षि व्यास जी महाराज महाभारत में लिखते हैं कि पहले सभी ब्राह्मण थे अर्थात् स्वभाव से सभी ब्राह्मण थे अर्थात् स्वभाव से सभी ज्ञानी उत्पन्न हुए थे। वेद का पूर्ण ज्ञान बाद में हुआ, लेकिन उनका स्वाभाविक ज्ञान बहुत ज्यादा था। यदि मनुष्य इतने ज्ञानी उत्पन्न हुए थे, तब राजा की आवश्यकता क्यों हुई? महाभारत में आता है- सभी ऋषि-मुनि एकत्र होकर महर्षि ब्रह्मा के पास गए और उनसे कहा कि हमारा कोई राजा होना चाहिए, तो महर्षि ब्रह्मा ने भगवान् मनु को

निर्देश वा आदेश दिया कि तुम राजा बनो और मनुस्मृति में आता है कि सभी ऋषि-मुनि भगवान् मनु के पास गए और उनसे वर्णाश्रम धर्म के बारे में विस्तार से उपदेश देने की बात कही, राजनीति के उपदेश देने की बात कही। भगवान् मनु संसार के सबसे पहले राजा थे। अगर अरब, यूरोप, अमेरिका, चीन, रूस, ऑस्ट्रेलिया, अफ्रीका आदि देशों में रहने वाले हमारे भाई सोचते हैं कि भगवान् मनु भारत के हैं, तो उनकी यह सोच गलत है। कुरान या बाइबिल में देख लीजिए, वहाँ 'नूँह' शब्द आता है। कोई बताए कि ये नूँह कौन हैं? भगवान् मनु ही नूँह थे। उस समय ये सब मजहब नहीं थे, ये तो अब बने हैं, पहले हम सब एक ही थे। भगवान् मनु संसार के सबसे पहले राजा थे और उस समय वे सबसे बड़े विद्वान् व पराक्रमी माने जाते थे, इसलिए महर्षि ब्रह्मा ने उनको आदेश दिया था कि तुम राजा बनो।

इस प्रकार यह मन्त्र बता रहा है कि एक विद्वान् राजा की खोज करो अर्थात् पहले मन्त्र में राजव्यवस्था और शिक्षा-व्यवस्था का निर्देश है तथा इसमें विज्ञान एवं तकनीक से लेकर सम्पूर्ण सृष्टि का निर्देश है। अग्नि का अर्थ और भी होता है- सेनानायक भी होता है, लेकिन वह राजनीति में आ जाता है। इस प्रकार से इसी मन्त्र में इस धरती पर या अपने-2 देश में कैसे रहना है, कैसा राजा बनाना है, कैसे विद्वान् को गुरु बनाना है, इस सृष्टि को कैसे जानना है और कैसे तकनीक का आविष्कार करना है, इन सबका मूलमन्त्र बतलाया गया है। यह अर्थ हमने संक्षेप में किया है। इसमें राजा के गुणों पर बहुत विस्तार से कहा जा सकता है। क्योंकि यह एक मन्त्र है, इसलिए इसमें सम्पूर्ण सृष्टि के सार के साथ सम्पूर्ण सृष्टि का व्यवहार जीने के लिए जो भी व्यवहार हैं, उन सबका मूल भी साथ में आएगा। अब हम इसका एक अर्थ और करेंगे- आध्यात्मिक अर्थ, जिसकी चर्चा हम कल करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

10. सुखी रहना है, तो स्वयं को जानो

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! हम पिछले कई दिनों से इस मन्त्र पर विचार कर रहे हैं। आज हम इसके आध्यात्मिक अर्थ की चर्चा करते हैं। परमात्मा ने मनुष्य को इस मन्त्र के माध्यम से सम्पूर्ण सृष्टि कैसे बनी और कैसे चल रही है, इसका सार बताया अर्थात् सृष्टि विज्ञान की सम्पूर्ण भूमिका इस मन्त्र में है, इसलिए यह पहला मन्त्र है। हमें जीवन जीने के लिए, ज्ञान एवं तकनीक के विकास के लिए और समाज व विश्व को सुसंगठित, सुखी व समृद्ध करने के लिए क्या करना चाहिए, इसकी भी भूमिका इस मन्त्र में बताई गई है, जिसकी चर्चा हम अपने आधिभौतिक भाष्य में कर चुके हैं।

अब प्रश्न आता है कि चार ऋषियों को या मनुष्यों को यह ज्ञान हो गया कि सृष्टि कैसे बनी, कैसे चल रही है और इसका उपयोग कैसे किया जाए। तब क्या उनका पूर्ण उत्थान हो जाएगा? जैसे किसी व्यक्ति को यह बता दिया जाए कि तुम्हारा यह वाहन है, इस प्रकार से बना है, इस प्रकार चल रहा है, इसका ऐसे उपयोग करना चाहिए और ऐसे नहीं करना चाहिए, इतना ज्ञान दे दिया, तब भी क्या मनुष्य का उत्थान हो जाएगा? नहीं होगा। आज यही हो रहा है। पहले तो सृष्टि की अधूरी जानकारी, फिर सृष्टि-संचालन कैसे हो रहा है, इसकी भी अधूरी जानकारी, तब सृष्टि में कैसे रहना चाहिए, उसे यह ज्ञान कैसे होगा? और यदि सृष्टि का यह ज्ञान हो भी जाए, तब भी वह व्यक्ति अपना सम्पूर्ण उत्थान नहीं कर सकता, जब तक उसे यह न बताया जाए कि सृष्टि के स्वामी तुम नहीं हो, सृष्टि का मालिक वा सृष्टि का स्वामी कोई और है, जिसने सृष्टि बनाकर तुम्हें दी है।

यहाँ वेद उपदेश करता है कि हे मनुष्यो! इस सृष्टि में यज्ञ हो रहा है अर्थात् जो सृष्टि है उसके छः अग्नि, जिनको हम पहले बता चुके हैं, आधिभौतिक में राजा-गुरु आदि को भी अग्नि बता चुके हैं, लेकिन अब आध्यात्मिक अर्थ में अग्नि का अर्थ है- जीवात्मा, क्योंकि शरीर के अन्दर सभी इन्द्रियों को आगे ले जाने वाला जीवात्मा ही होता है, जीवात्मा ही उनका नायक होता है। जब तक शरीर में आत्मा है, तब तक सारी इन्द्रियाँ काम कर रही हैं, सारा शरीर काम कर रहा है, लेकिन जैसे ही वह जीवात्मा वा चेतन शक्ति निकल जाती है, तो शरीर मृत हो जाता है। जैसे बिजली के जाने से सभी यन्त्र बन्द हो जाते हैं, वैसे ही शरीर काम करना बन्द कर देता है।

आध्यात्मिक अर्थों में जीव को अग्नि इसलिए कहते हैं, क्योंकि जीवात्मा ही सबका अग्रणी होता है, जीवात्मा ही सबका पुरोहित होता है। अब प्रश्न उठता है कि किसका पुरोहित होता है? जब भी हम कोई कार्य कर रहे होते हैं, जैसे आँख से देख रहे होते हैं, कान से सुन रहे होते हैं, नाक से सूँघ रहे होते हैं, त्वचा से स्पर्श कर रहे होते हैं, जो भी कर रहे होते हैं, उस प्रत्येक कार्य के पीछे जीवात्मारूपी चेतना की भूमिका अनिवार्य होती है, वह प्रत्येक कार्य के पीछे है। इसलिए उपनिषत्कार ने कहा- 'एष हि द्रष्टा स्प्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मन्ता बोद्धा' अर्थात् यह जीवात्मा ही देखने वाला है, यही स्पर्श करने वाला है, यही सूघँने और रस को ग्रहण करने वाला है, यही सुनने वाला है, यही मनन करने वाला है, यही किसी बात को समझने वाला है।

इन्द्रियाँ तो जीवात्मा के साधन हैं। जैसे हम कलम से लिखते हैं, कागज पर अक्षर कलम के हैं, लेकिन उस कलम को चलाने वाला मैं हूँ। देख आँख रही है, लेकिन आँख तो साधन है, देखने वाला कोई ओर है। मेरी आँख, मेरे कान, मेरी नाक, मेरे हाथ, मेरे पैर, मेरा मन, मेरा मस्तिष्क यह मेरा कहने वाला कौन है? यह आत्मा है। आत्मा कहता है, यह मेरी आँख है, आत्मा कहता है, यह मेरा मुँह है और आत्मा कहता है, यह मेरा शरीर है। इसलिए

जो आत्मा मेरा-2 कह रहा है, वही अग्नि है और वही पुरोहित है, क्योंकि उसी आत्मा ने सूक्ष्म शरीर के रूप में इन सबको धारण कर रखा है, फिर स्थूल शरीर को धारण कर रखा है। जब वह इनको धारण करना छोड़ देता है, स्थूल शरीर का साथ छोड़ देता है, तब वह अपने कर्मों के साथ सूक्ष्म शरीर को लेकर चला जाता है और जब मुक्ति होती है, तब सूक्ष्म शरीर को भी छोड़ देता है और अकेला कारण शरीर के साथ स्वतन्त्र विचरण करता है।

जीवात्मा देव भी है, क्योंकि यही सभी इन्द्रियों का प्रकाशक है, ये इन्द्रियाँ उसकी चेतना से चेतनवत् व्यवहार करती हैं। जैसे अग्नि में लोहा अग्निवत् व्यवहार करता है, लेकिन अग्नि नहीं हो जाता। आत्मा की चेतना के कारण आँख, कान आदि चेतनवत् व्यवहार करते हैं, बुद्धि और मन भी चेतन की तरह कार्य करते हैं। जैसे किसी दर्पण के सामने एक गुलाब का पुष्प रख दिया जाए, तो दर्पण गुलाब के पुष्प जैसा दिखाई देता है, वहाँ उसका प्रतिबिम्ब मात्र होता है। जीवात्मा की चेतना से सब चेतन हो रहे हैं और चेतन बन कर व्यवहार कर रहे हैं। गरम लोहा आग लगा सकता है, परन्तु वह लोहा वास्तव में अग्नि नहीं होता, अग्निवत् हो जाता है अर्थात् अग्नि के समान हो जाता है। वैसे ही जब तक आत्मा इन्द्रियों वा शरीर के अन्दर है, तभी तक वह शरीर चेतन की तरह व्यवहार करता है। इसलिए आत्मा को देव कहा। वह इन सब इन्द्रियों का प्रकाशक है, सबका संचालक है और वही 'पुरोहित' 'ऋत्विक्' और 'होता' है।

जीवात्मा इस शरीर में यज्ञ कर रहा है, इन्द्रियाँ उसके साधन हैं, कर्मों की आहुति उसमें डाली जा रही है और फिर फल भोग रहा है, सृष्टि में सारे कार्य कर रहा है। कुछ आत्मा याज्ञिक होते हैं, तो कुछ आसुरी होते हैं, कुछ आत्मा परोपकार करते हैं, तो कुछ दूसरों का अपकार करते हैं। लेकिन कर्त्ता वह चेतन आत्मा ही है, इसलिए यह 'ऋत्विक्' व 'होता' है, सारे कार्यों को करने वाला है। शरीर में जो भी कर्म हैं, जो भी कार्य हो रहे हैं, उन सबको

धारण करने वाला तथा सभी प्रकार के गुणों अथवा अवगुणों को धारण करने वाला यही जीवात्मा है। इसलिए यह 'रत्नधातम' भी है।

कुछ लोग कहते हैं कि आत्मा तो निर्विकार है, तब उसमें दोष कहाँ से आ जाता है? आत्मा बिल्कुल निर्विकार है, लेकिन किसी भी दोष का उत्तरदायी भी आत्मा ही होता है, क्योंकि जड़ कभी दोषी नहीं होता, जड़ को न तो श्रेय ही दिया जा सकता है और न ही जड़ किसी कार्य के लिए दोषी होता है, बल्कि उसका उपयोग करने वाला होता है। जैसे हमने कुल्हाड़ी से किसी वृक्ष को काटा, कुल्हाड़ी की चोट पड़ी और कुल्हाड़ी ने ही उसको काटते-2 सारा पेड़ काट दिया। लेकिन कुल्हाड़ी चेतना के बिना यह नहीं कर सकती। तो हम लकड़हारे हैं, हमारी सारी इन्द्रियाँ कुल्हाड़ी हैं, हाथ-पैर सब कुल्हाड़ी हैं, इसलिए अगर पेड़ काटा या किसी की गर्दन काटी, तो हत्या का दोष भी लकड़हारे को लगेगा और कंटीले पेड़ वा झाड़ियाँ काटने का श्रेय भी लकड़हारे को ही मिलेगा। इसलिए यह आत्मा ही दोषी है, यही यज्ञ कर रहा है और यही सब गुणों और अवगुणों को धारण करने वाला है, इसलिए यही 'रत्नधातम' है।

यह आत्मा चाहे, तो मुक्ति को प्राप्त कर सकता है और संसार में शान्ति की स्थापना कर सकता है, संसार को आनन्दित कर सकता है और यही आत्मा चाहे, तो संसार को नरक बना सकता है, जैसे आज नरक बनाया जा रहा है। ये नरक बनाने वाले ही आज संसार पर गुप्त रूप से शासन कर रहे हैं और विभिन्न देशों की सरकारें उनके हाथ की कठपुतली मात्र हैं।

यहाँ वेद कहता है कि हे मनुष्यो! ऐसे जीवात्मा रूपी अग्नि, जो पुरोहित, देव, ऋत्विक्, होता, रत्नधातम रूप है, उसको ईळे अर्थात् उसकी खोज करो, उसको पहचानो अर्थात् स्वयं को पहचानो। जब तक किसी साधन का उपयोग करने वाला यह नहीं जानता कि तू कौन है, तो वह साधन का भी उपयोग नहीं कर सकता। एक जिला कलेक्टर को जब तक यह मालूम नहीं

पड़े कि वह जिला कलेक्टर है, तो वह अपने कार्यों को ठीक-2 सम्पन्न नहीं कर सकता। अध्यापक जब तक यह अनुभव न करे कि वह अध्यापक है, तब तक वह पढ़ा नहीं सकता। पिता अपने को यह अनुभव न करे कि वह पिता है, तो वह पितृधर्म का पालन नहीं कर सकता। जब तक पुत्र यह न समझे कि वह पुत्र है, तब तक वह पुत्रधर्म का पालन नहीं कर सकता। चिकित्सक यह न समझे कि वह चिकित्सक है, तब तक वह चिकित्सा नहीं कर सकता। इंजीनियर जब तक यह न समझे कि वह इंजीनियर है, तब तक वह अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन नहीं कर सकता। इसलिए प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि वह जानने का प्रयास करे वा जाने कि वह कौन है? हम चिकित्सक हैं, किसान हैं, मजदूर हैं, अध्यापक हैं या सैनिक हैं, यह तो सब जान रहे हैं, इन सबकी तो संसार में बात की भी जा रही है, लेकिन मूल बात यह है कि इस सबके पीछे भी हम यह जान रहे हैं कि हम कौन से मजहब के हैं, जो वास्तव में गलत है। हम कथित जातियों को जानते हैं, हम स्त्री वा पुरुष यह भी जानते हैं, लेकिन यह नहीं जानते कि इसके पहले हम क्या हैं? इसके पहले हम मानव हैं और उससे भी पहले हम आत्मा अर्थात् जीवात्मा हैं, हम चेतन हैं।

जब हम एक दूसरे को भिन्न-भिन्न मानते हैं, जाति-मजहब की बात करते हैं, तब हमें विचारना चाहिए कि हम सबके शरीर अणुओं, परमाणुओं व सूक्ष्म कणों से बने हैं। उन कणों की जाति व मजहब क्या है? क्या कोई जानता है? जब हम जन्म भी नहीं लेते, तब भी हम आत्मा वा रूह के रूप में विद्यमान रहते हैं, उसकी जाति वा मजहब क्या है? जब शरीर व आत्मा दोनों में से किसी की कोई जाति वा मजहब नहीं है, तब इनके संयोग की जाति वा मजहब कहाँ से आ गये? फिर जाति तो वह है, जिसे शरीर को देखकर पहचान लिया जाए। जैसे गाय, घोड़ा, मनुष्य, सर्प आदि की जाति। तब इसे क्यों नहीं मानते? मजहब कृत्रिम हैं, लेकिन धर्म तो प्राकृतिक होता है, जो सृष्टि के आदि से ही चला आ रहा है, उसे ही मानव धर्म कहते हैं। अगर

मनुष्य यह भी जान ले कि मैं मानव हूँ और मेरे जैसे दिखने वाले सभी मानव हैं अर्थात् हमारी सबकी श्रेणी एक है, इसलिए हम सभी भाई हैं और हमारा परस्पर भाई-बहन का सम्बन्ध है, तो संसार में शान्ति की स्थापना हो जाए, लेकिन हम ऐसा नहीं करते। यदि वे यह मान भी लें कि हम मानव है, फिर वे दूसरे पशु-पक्षियों के लिए दानव बन जाएँगे, उन्हें मारकर खाएँगे, वहाँ उनकी मानवता ऐसा करने से मना नहीं करेगी, क्योंकि उन्होंने अभी तक यह नहीं समझा कि हम चेतन आत्मा हैं।

जब हम यह जान लेंगे कि हम चेतन आत्मा हैं, तो वैसा ही व्यवहार भी करेंगे, जिससे सभी चेतन आत्माओं व सभी प्राणियों को सुख होवे। जैसे एक परिवार के सभी सदस्य यह मान लें कि हम एक परिवार के सदस्य हैं, तो वे मिलकर रहेंगे, अपनी रोटी मिल-बाँटकर खायेंगे, अपने साधनों का भी मिल-बाँट कर उपयोग करेंगे, दुरुपयोग नहीं करेंगे। जब गाँव वाले यह मान लें कि हम सभी गाँव वाले हैं, हमें इसी गाँव में रहना है, तो गाँव के लोग आपस में नहीं लड़ेंगे। जब हम यह जान लेंगे कि इस देश में रहने वाले हम सब भारतीय हैं, तो आपस में दंगे-फसाद नहीं करेंगे। जब हम यह जान लेंगे कि हम सब पृथ्वीवासी हैं, हम सभी मनुष्य हैं, तो पृथ्वी पर अशान्ति नहीं होगी, जैसी आज हो रही है। लेकिन अब भी वे दूसरे जानवरों पर दया नहीं करेगें। वे दया तब करेंगे, जब यह जान लेंगे कि हम सभी आत्मा हैं, मनुष्य आदि सभी प्राणियों में एक जैसा आत्मा होता है। जैसे मुझे सुख-दुःख होता है, वैसे ही मछली, मुर्गे आदि सभी को सुख-दुःख होता है। ऐसा जानने पर कोई अपने स्वाद, स्वार्थ वा लोभ के लिए उनकी हत्या नहीं करेगा। इसलिए वेद कहता है कि तुम आत्मा रूपी अग्नि की खोज करो अर्थात् उसे जानो और जान करके वैसा ही आचरण करो।

क्या आज कोई ऐसा आचरण करता है? आज मनुष्य ऐसा आचरण करता है, जैसे कि वह मशीन है। आज के अधूरे विज्ञान ने हमें सिखाया कि

तुम मशीन हो, तुम एक रोबोट हो। इसलिए पृथिवी का दोहन कर लो, सारा कोयला निकाल लो, सारा डीजल खत्म कर दो, सबका उपयोग कर लो और उपयोग करने में भी अपने को मनुष्य नहीं मानो। कोई स्वयं को यहूदी मानता है, कोई ईसाई, कोई हिन्दू, कोई मुसलमान, तो कोई और कुछ मानता है। कोई अमरीकन मानता है, कोई पाकिस्तानी, कोई अरबी, कोई यूरोपियन, कोई रशियन, कोई भारतीय (वास्तव में इण्डियन), तो कोई चाइनीज मानता है। लेकिन कोई भी अपने आप को मानव नहीं मानता। फिर क्या होता है? संघर्ष होता है।

कोई चाहता है कि मैं अधिक संसाधनों का उपयोग करूँ, मैं ही सारी वसुधा का राजा बन जाऊँ, क्योंकि अन्य सब मेरे सामने तुच्छ हैं। वह सबको मनुष्य मानता ही नहीं है। उनकी दृष्टि में गरीब, कमजोर, ग्रामीण, किसान, मजदूर आदि का कोई मूल्य नहीं है। वह ऐसी तकनीक लायेगा कि जिसमें किसानों की आवश्यकता ही न हो, मशीनों से ही सारा काम हो जाये। किसान मरे, तो मर जाए, उसको कोई समस्या नहीं है। ऐसा क्यों हो रहा है? क्योंकि आज यह बताया ही नहीं जा रहा कि हम सब चेतन प्राणी हैं और इसलिए इस पृथ्वी तथा इस ब्रह्माण्ड पर सभी चेतन प्राणियों का साझा आधिकार है। इसलिए वेद कहता है- अपने को पहचानो, तुम आत्मा हो, उसे खोजो और साधना करो।

आज साधना भी हो रही है, योगसाधना भी हो रही है। आज योग का अर्थ हो गया- कसरत करना। जो शराब पी रहा है, वह भी कहता है कि मैं योगा करता हूँ, जो मांस खाता है, वह भी कहता है कि मैं योगा कर रहा हूँ। हमने योचा कि विश्व में योग पहुँच गया। योग का नाम योगा हो गया। 21 जून को योग-दिवस मनाया जा रहा है। लेकिन योगी कौन है? कई लोग तो नाम के आगे योगी लगाते हैं। झूठ बोलने वाला, दुराचारी, ठग, मांसाहारी, लम्पट, लोभी, चोर, हिंसक, शराबी, नशेबाज आदि सब योगी हो गए। यह

सब इसीलिए हो रहा है, क्योंकि कोई नहीं समझ रहा कि तुम चेतन आत्मा हो। किसी भी विश्वविद्यालय में अथवा किसी भी रिसर्च सेन्टर में यह बात नहीं बताई जाती कि तुम चेतन हो।

मनुष्य को सब पढ़ाया जा रहा है, पर यह नहीं पढ़ाया जा रहा कि तुम कौन हो। तुम इंसान हो, यह भी नहीं पढ़ाया जा रहा, फिर आत्मा तो बड़ी बात है। कही पर भी नैतिकता व सदाचार की शिक्षा नहीं है। इसलिए वेद ने पहली पीढ़ी के लोगों को, पहले मन्त्र के द्वारा ही सम्पूर्ण सृष्टि का सार बताकर, फिर लोक व्यवहार की बातें बताकर, फिर बताया कि तुम अपने को जानो कि तुम क्या हो। जो धर्माचार्य वा धर्मगुरु हैं, वे पढ़ा रहे हैं कि तुम हिन्दू हो, उनमें भी शैव हो, शाक्त हो, वैष्णव हो, सिक्ख हो, तुम मुस्लिम व ईसाई हो, यहूदी हो, जैन, बौद्ध व पारसी हो, तो कोई स्वयं को बिना धर्म वाला अर्थात् वामपंथी कहता है। कोई भी यह नहीं कहता कि तुम मनुष्य हो और कोई-कोई ऐसा भी कहते हैं, तो वे मनुष्यता की सही परिभाषा नहीं जानते, इस कारण वे भी अपना-अपना मजहब बना लेते हैं।

जरा विचारें, हम क्या सोच रहे हैं, लोग क्या सोच रहे हैं, जो सबको खाना चाहते हैं, वे क्या सोच रहे हैं कि वे कभी नहीं मरेंगे। ऐसा ही रावण, कंस, दुर्योधन आदि सबने सोचा था, लेकिन वे सब कहाँ गए? उनका अस्तित्व ही मिट गया, धरती सबको खा गई और जो आज भी ऐसा सोच रहे हैं, उनको भी खा जाऐगी। वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं और वे कौन हैं? वे नहीं जानते कि एक दिन उनकी टूटी कब्रों में सियार उनकी खोपड़ियों से ठोकर मारते फिरेंगे। किसी की चिता की राख में गधे लोट-पोट होंगे। सब कुछ बिखर जायेगा, ईंट-ईंट बिखर जाएगी, सब कुछ मिट जाएगा। इसलिए सृष्टि विज्ञान को बताने के पश्चात् इस धरती के सर्वश्रेष्ठ प्राणी को यह बताना अनिवार्य था कि तुम अपने को खोजो, अपने आप को पहचानो।

अगर मनुष्य मान ले कि मैं चेतन हूँ और शरीर जड़ है, इस शरीररूपी आवरण को मुझे एक दिन छोड़ना है, तो वह शान्ति से जीयेगा, अफरा-तफरी नहीं मचायेगा, किसी के गले नहीं काटेगा, हिंसा नहीं करेगा। क्यों? क्योंकि वह सोचेगा कि सब क्षणभंगुर है, इसलिए अधिक भोग मत कर। अगर किसी व्यक्ति को यह कह दिया जाए कि तुम्हारी आयु के केवल 7 दिन शेष हैं, तो वह सारे काम छोड़कर साधना करने लग जाएगा, धार्मिक बन जाएगा कि कहीं कोई गलत काम नहीं हो जाए। अगर उसकी ऐसी भावना जीवन भर बनी रहे और यह भावना दृढ़ हो जाए कि 7 दिन बाद नहीं, परन्तु एक दिन मुझे जाना है, तो मैं क्यों संचय करूँ?

क्या कारण है कि कुछ पूँजीपतियों के पास देश के सकल घरेलू उत्पाद से भी अधिक सम्पत्ति है। सुना गया है कि दो परिवार ऐसे हैं, जिनके पास संसार की अस्सी प्रतिशत सम्पत्ति है। मैं नहीं जानता कि यह कितना सत्य है, लेकिन मैंने एक आयकर आयुक्त को एक सेमीनार में कहते सुना था। जिन परिवारों के पास विश्व की 80 प्रतिशत सम्पत्ति हो, उनका आमाशय भी कोई दो किलोमीटर लम्बा नहीं है, उतना ही है जितना बड़ा गरीब व्यक्ति का आमाशय होता है और वह भी उतना ही खाएगा। मांसाहारी मांस खाएगा और अपने पेट को श्मशान बनाएगा, पर खाएगा सीमित ही, क्योंकि वह अपनी इन्द्रियों से सीमित ही भोग कर सकता है, असीमित भोग कर ही नहीं सकता। उसे भी सोने के लिए चारपाई चाहिए, मरेगा तो भी उसको चारपाई के बराबर ही जगह मिलेगी। फिर भी इतना संचय क्यों कि सारी दुनिया की सम्पत्ति मैं ही ले लूँ।

अब खोज की जा रही है कि उनकी आयु बढ़ जाए। अपनी आयु बढ़ाना और दूसरों की जान लेना, गरीब मर जायें, तो उनकी झोपड़ियों को जला करके, अपने भवन भव्य बनाने की तैयारी हो रही है, केवल तैयारी ही नहीं हो रही, भवन बनाए जा रहे हैं। जो ऐसे लोग हैं, उनकी सम्पत्ति में कितने

निर्धनों का रक्त है, उसमें कितनों का शोषण हुआ है? कोई धन के लोभ में, कोई यश के लोभ में, तो कोई प्रतिष्ठा के लोभ में ऐसा करता है। न धन बचेगा, न यश और न ही प्रतिष्ठा, यहाँ से सबको चले जाना है। फिर भी व्यक्ति पाप कर रहा है, कारण? उनकी ऐसी सोच।

क्या बाइबिल, कुरान, पुराण या वेद में ऐसा लिखा है कि ये सब संसाधन मात्र तुम्हारे लिए हैं और तुम इन्हें साथ ले जाओगे या अमर हो जाओगे? कोई भी मनुष्य को अमर नहीं बताता, लेकिन फिर भी वे व्यवहार ऐसे कर रहे हैं कि वे अमर हैं, वे सर्वशक्तिमान् हैं। उनको यह पता ही नहीं है कि वे भी चेतन हैं। जो चेतना एक चींटी के अन्दर होती है, वही चेतना बड़े-बड़े शक्तिशाली लोगों में है। बड़े-2 धनपति लोगों में भी वही आत्मा है, लेकिन फिर भी इतना पाप क्यों? मैं इस पाप की और अधिक चर्चा नहीं करूँगा, आप सब जानते हैं कि आज क्या हो रहा है, कैसी लूट हो रही है? बीमारी के नाम पर क्या-2 हो रहा है, क्या-2 हुआ है, क्या-2 अपराध हो रहे हैं। मैं मानता हूँ कि इन सबका कारण अज्ञानता है।

अरे संसार के ऐसे पूँजीपतियो! सत्ताधारियो! जो यह सोच रहे हो कि हम अमर हो जायेंगे, हमारा यश अमर रहेगा, किसी की सम्पत्ति को लेकर सुखी हो जायेंगे, तो ऐसा कभी नहीं होगा। कभी आचार्य यम ने जिज्ञासु ब्रह्मचारी नचिकेता को कहा था- 'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः' अर्थात् वित्त से कभी मनुष्य तृप्त नहीं होता। फिर उसके लिए इतना अहंकार? आज तक कोई अमर नहीं हुआ, तब भी इतना पाप? इसलिए यह मन्त्र बताया, इस मन्त्र पर विचार करें और अपने-अपने महजबी ग्रन्थों को देख लें कि वेद के प्रारम्भ में ही इस एक मन्त्र में कितना उपदेश दिया है।

हमें इसकी व्याख्या करते-2 आज कितने दिन हो गए। इस मन्त्र से प्रेरणा लेकर हम अपनी खोज करें। हमने बहुत खोज लिया, आकाश की ऊँचाईयों तक पहुँच गए। हम गैलेक्सियों को देख रहे हैं, कितनी गैलेक्सियाँ

देख लीं, कहते हैं दो सौ करोड़ गैलेक्सियाँ देख लीं। बहुत सारे ग्रहों को ढूँढ रहे हैं, तारों को बनते और बिगड़ते देख रहे हैं, मंगल पर जा रहे हैं, हम सौरमण्डल से बाहर अपने यन्त्र भेज रहे हैं, समुद्र की गहराइयों को नाप रहे हैं। हमने सब कुछ देखा, पर अपने को नहीं देखा कि हमारे भीतर कौन है अर्थात् हम किस रूप में हैं, यह नहीं देखा। जो अपने को नहीं देखता और सबको देखता है, वह मनुष्य मूर्ख एवं महापापी होता है। वे सभी मूर्ख एवं घोर पापी हैं, जो इस भाग-दौड़ में चल रहे हैं, सारी सम्पत्ति इकट्ठी कर रहे हैं, सबको मूर्ख बना रहे हैं और दूसरों को मूर्ख बनाकर स्वयं को बुद्धिमान् मान रहे हैं। वे समझ लें कि संसार कैसे बना, यह आपने नहीं जाना, आधुनिक विज्ञान से थोड़ा जान सकते हो, पूरा तो कभी नहीं। लेकिन वैदिक विज्ञान से पूरा जान सकते हो।

राजा कैसा होना चाहिए, गुरु कैसा होना चाहिए, यह भी जान लोगे, परन्तु मैं कहता हूँ कि मैं क्या हूँ, यह जानो, तब संसार में जीने का मार्ग मिलेगा। एक अन्तिम बात और जाननी है, उसकी चर्चा हम कल करेंगे। आज इतना ही। ओम् शम्।

* * * * *

11. आखिर ईश्वर को क्यों खोजें?

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! हमने ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र के आध्यात्मिक अर्थ की चर्चा की थी, जिसमें स्वयं को जानने की प्रेरणा की गई है। अब अगला अर्थ लेते हैं। इस सृष्टि यज्ञ का जो अग्नि है, वह परमात्मा है। परमात्मा क्यों है? जैसे शरीर में जीवात्मा सभी इन्द्रियों और शरीर का नायक है, वैसे ही परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि का नायक है, इसलिए वह अग्नि है और अग्नि क्यों है? क्योंकि सृष्टि का प्रारम्भ परमात्मा ही करता है।

'अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते' अर्थात् यज्ञ करने के लिए अग्नि लाया जाता है, लेकिन जड़ अग्नि की बात करें, तो अग्नि लाने वाला तो कोई ओर होता है। इसलिए जो अग्नि ला रहा है, वह भी अग्नि है, वह उसका भी नेता है। परमात्मा विद्युत्, ऊष्मा, समष्टि मन, प्रकृति आदि सबका नेता है, क्योंकि सब पर वही नियन्त्रण कर रहा है, इसलिए परमात्मा अग्नि है और परमात्मा पुरोहित भी है। अग्नि का पर्यायवाची पुरोहित है, क्योंकि परमात्मा सदैव हमारे सम्मुख उपस्थित रहता है। कोई भी वस्तु, पदार्थ, तरंग वा कण ऐसा नहीं है, जहाँ वह नहीं हो। जहाँ परमात्मा है, वहाँ आवश्यक नहीं है कि अन्य कोई पदार्थ भी विद्यमान हो। लेकिन जहाँ कोई भी पदार्थ विद्यमान है, वहाँ परमात्मा अवश्य है। हमारे लिए प्रकृति अनन्त है, सब जगह है, लेकिन परमात्मा प्रकृति से भी महान् है। इसलिए उपनिषद्कारों ने कहा- **'अणोरणीयान् महतो महीयान्'** परमात्मा अणु से अणु है अर्थात् सूक्ष्म से सूक्ष्म है और महान् से महान् है अर्थात् व्यापक से व्यापक है। इसलिए वह पुरोहित है। वह सबका हित ही करता है।

परमात्मा ने सृष्टि हम जीवात्माओं की भलाई के लिए अर्थात् सृष्टि का उपभोग करते हुए मोक्ष पाने के लिए बनाई है। यदि सृष्टि का उपभोग करते हुए मोक्ष नहीं पाया, तो हमारा जीवन व्यर्थ है। मोक्ष पाने का अधिकार हम मनुष्यों को ही है, शेष सभी प्राणी केवल सृष्टि का उपभोग करने वाले है, मोक्ष पाने वाले नहीं। इसलिए जो भोग करते हुए मोक्ष प्राप्त न कर पाए, उसका मानव जीवन व्यर्थ है। लेकिन यह इतना सरल नहीं है, इसमें वर्षों लग सकते हैं, कई जन्म व्यतीत हो सकते हैं। आज तो मोक्ष दिलाने के नाम पर बड़े-बड़े ठग कथित गुरु अपना विशाल कारोबार चला रहे हैं। कोई स्वयं को ब्रह्म साक्षात्कर्त्ता कहता है, तो कोई ईश्वर से बात करने व कराने का ठेका लेता है, परन्तु जब उनके आचरण में झाँक कर देखें, तो उसका घृणित स्वरूप दिखाई देता है। हाँ, सभी ऐसे नहीं हैं, परन्तु बहुलता इनकी ही है। परमात्मा पुरोहित है, सबके सम्मुख विद्यमान है और सबके अन्दर विद्यमान है।

उपनिषद् कहता है- **'य आत्मनि तिष्ठन् यस्यात्मा शरीरम्'** अर्थात् वह हमारे आत्मा में निवास करता है अर्थात् हमारा आत्मा ही उस परमात्मा का शरीर है, इसलिए उसे पुरोहित कहा। परमात्मा सब प्राणियों का हित करने वाला है। जहाँ भी हमें दुःख एवं क्लेश दिखाई देते हैं, वे हमारे कर्मों का परिणाम हैं या दूसरे किसी के अन्याय वा पापों का परिणाम हैं। परमात्मा ने यह सृष्टि सबकी भलाई के लिए बनाई थी। परमात्मा ने अत्यन्त सुन्दर एवं स्वस्थ वायु, जल, भूमि सब कुछ दिया था, परन्तु बिगाड़ा किसने? हमने। भले ही पृथिवी नष्ट होने के कगार पर चली जाए, लेकिन परमात्मा तो पुरोहित है, क्योंकि वह यह सब नहीं कर रहा है।

उसको नहीं जाना गया, उसको और उसके उपदेशों को नहीं समझा गया, इसलिए हम इस प्रकार के दुःख भोग रहे हैं। नास्तिकता की प्रवृत्तियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। परमात्मा देव है अर्थात् दिव्य गुणों वाला और सबका प्रकाशक है। हम सोचते हैं कि सूर्य, चन्द्र, तारे, विद्युत् में प्रकाश है, लेकिन

इन सबके प्रकाश के पीछे परमात्मा का प्रकाश है। वह 'ओम्' रश्मियों के द्वारा ही सबको प्रकाशित कर रहा है। सब प्रकाशों के पीछे उसका प्रकाश है, सब प्रकार की विद्युत् के पीछे उसकी विद्युत् है, प्रत्येक ऊर्जा के पीछे उसकी ऊर्जा है, हर बल में उसका बल है, हर गति में उसकी गति है। वह गति नहीं करता, क्योंकि सर्वव्यापक है। जहाँ जाना होता है, वहाँ वह पहले ही उपस्थित होता है, इसलिए उसको जाना ही नहीं पड़ता। '**अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः**' अर्थात् वह बिना पैर के चलता है, क्योंकि उसको चलना नहीं पड़ता है, वह सब जगह व्यापक है। उसको हाथ की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि हाथ दूसरों को पकड़ता है, पर वह तो सबके अन्दर है, हर कण, तरंग सबके अन्दर है, इसलिए उसे हाथ की भी आवश्यकता नहीं है। वह निराकार, सर्वव्यापक व सर्वशक्तिमान् है, इसलिए वह सबको नियन्त्रित करता है। सबको ज्ञान का प्रकाश देता है। वही सबको लौकिक प्रकाश भी दे रहा है और वह सबको जीतने में समर्थ है।

जो सोचते हैं कि हम बहुत शक्तिशाली हैं, लेकिन उसकी शक्ति के सामने उनका कोई मूल्य नहीं है। जो सोचते हैं कि वे बहुत बड़े सम्पत्तिशाली हैं, लेकिन उसकी सम्पत्ति जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में है, उसके सामने किसी की सम्पत्ति कुछ भी नहीं है और जिसको आप अपनी सम्पत्ति बता रहे हैं, यह भी उसी की है। जब वह चाहेगा आपके कान पकड़ कर आपको अपनों से दूर कर देगा और आपके परिवार वाले देखते रह जायेंगे, रोते रह जायेंगे। उसमें कितनी शक्ति है, जो सम्पूर्ण गैलेक्सियों को घुमा रहा हो, जो सबमें व्याप्त होकर सबको धारण कर रहा है, '**स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमाम्**' जिसने द्युलोक व पृथ्वी लोक को धारण किया हो, वह कितना शक्तिशाली होगा? उस देव परमात्मा को समझो।

वह ऋत्विक् भी है, क्योंकि वही हर काल में समय-समय पर सृष्टि की रचना करता है। सृष्टि और प्रलय का यह अनादि चक्र वही चलाता है।

सृष्टि सान्त है, पर सृष्टि-प्रलय का चक्र अनन्त है। यह सृष्टि कभी नष्ट भी होगी, लेकिन सृष्टि-प्रलय का चक्र कभी बन्द नहीं होगा, यह अनादि व अनन्त है। इस चक्र को चलाने वाला परमात्मा है, इसलिए वही सबका नियन्त्रक और होता है। उसने हमें सृष्टि बनाकर दी है, शरीर बनाकर हमें दिया है और हमारे कर्मों के अनुसार फल भी देता है, इसलिए वह 'होता' है। उसी ने यह यज्ञ प्रारम्भ किया है, सब व्यवस्था वही कर रहा है, बदले में उसे कुछ नहीं चाहिए। हम उसको देने का नाटक करते हैं, उसको दीपक से प्रकाश देने का नाटक करते हैं, उसको भोग लगाने का नाटक करते हैं, यह अपराध है। जो हमको दे रहा है, जो हमको जगा रहा है, जो हमको प्रकाश दे रहा है, हम उसको जगाते हैं, दिखाते हैं, कपड़े पहनाते हैं, खिलाते हैं। कोई उसे कथित तीर्थों में ढूँढता है, कोई मक्का, मदीना, येरुशलम आदि में ढूँढता है, यह बालकपन है।

वह परमात्मा रत्नों को धारण करने वालों में सबसे श्रेष्ठ है। आपके पास कितने रत्न हैं, लेकिन क्या वे आपके हैं? कौन मनुष्य है, जिसने रत्नों को बनाया है? कौन मनुष्य है, जो क्वार्क आदि को बना सकता है? कौन मनुष्य है, जिसने कोई पदार्थ बनाया है? अगर बनाया है, तो उसी परमात्मा ने पदार्थ में विकार करके बनाया है। जो आपका है, वह सब उसका है और जो आपका नहीं है, वह भी उसका है, सब कुछ उसी का है। इसलिए वह रत्नों को धारण करने वालों में सबसे श्रेष्ठ है। सभी प्रकार की रश्मियों, कणों, तरंगों, लोक-लोकान्तरों, छोटे-बड़े सभी पदार्थों को वही धारण करने वाला है।

'ईळे' अर्थात् उसकी खोज करो, उसको ढूँढो और जानो कि वह कहाँ है? वह व्यापक, अनादि और अनन्त है। ऐसे परमात्मा को खोजो। ऐसा उपदेश क्यों किया? क्या परमात्मा अपने को खोजने की बात कर रहा है? हाँ, अपने को खोजने की भी बात कर रहा है। इस आधार पर वेद किसी मनुष्य का लिखा हुआ नहीं है, यह परमात्मा का दिया ज्ञान है। सब कुछ

बताने के बाद कहा कि यह सब कुछ जो देख रहे हो, यह सब मेरा है। अगर एक शिक्षक यह जान भी ले कि वह शिक्षक है और मेरे सम्मुख जो विद्यार्थी बैठे हैं, वे मेरे छात्र हैं, तब भी क्या वह अपने कर्त्तव्य का निर्वहन पूरी तरह से कर पाएगा? नहीं कर पाएगा। जब तक उसे यह भय नहीं होगा कि तू शिक्षक अवश्य है, लेकिन तेरा भी शिक्षक कोई और है। तू राजा अवश्य है, लेकिन तेरा भी राजा कोई और है, तब उससे डरकर उसके संरक्षण में सही कार्य करेगा।

हमने किसी को साधन उपलब्ध करा दिए और साधन उपलब्ध कराके कहा कि तुम इनका उपयोग करो, तो वह इनका दुरुपयोग भी कर सकता है। भले ही कोई सबको चेतन माने, तब भी वह किसी और प्रकार से दुरुपयोग कर सकता है, उसके अन्दर अहंकार आ सकता है, उसके अन्दर दूसरों को देखकर ईर्ष्या हो सकती है। लेकिन भाई-भाई मानेगा, तो ईर्ष्या नहीं होगी। फिर भी यह सोच सकता है कि मुझे सब कुछ मिल गया। एक सत्ता, वह परमात्मा, जो प्रथम और अन्तिम सत्ता है, जिसके ऊपर कोई नहीं है। 'यो अस्याध्यक्षः ऋचो अक्षरे परमो व्योमन्' अर्थात् परमात्मा सब पदार्थों, सब चेतनों-जीवात्माओं व सम्पूर्ण जगत् का अध्यक्ष है, इसलिए उसको जानो।

जब मनुष्य को यह पता चलेगा कि जो तेरा है, वास्तव में वह तेरा नहीं है, उसमें सब जीवों का भाग है, लेकिन इसके आगे भी सब जीवों का भी नहीं है, अन्तिम रूप में वह परमात्मा का दिया हुआ है, हम तो याचक हैं, इसलिए हमें दिया गया है। कोई कहेगा कि यह तो हमारे कर्मों का फल दिया है, इसमें उसने क्या दिया? हमें दिया नहीं है, तो कुछ लिया भी नहीं है। बैंक का मैनेजर आपको आपका पैसा देता है, तो एहसान थोड़ी करता है। परमात्मा बिना वेतन के काम करता है, इसलिए उसका एहसान भी है। बैंक का मैनेजर जो वेतन लेता है, वह हमारे धन में से ही लेता है, उसका वेतन कहीं बाहर से नहीं आता है। लेकिन परमात्मा वेतन नहीं लेता, वह देता ही देता है। हमसे

कुछ नहीं लेता और उसका कोई स्वार्थ भी नहीं होता। सूर्य नहीं बनाता, तो उसको कोई कठिनाई नहीं थी। संसार नहीं बनाता, तो उसको कोई कठिनाई नहीं थी। उसने केवल हमारी भलाई के लिए ही यह सब किया है। हम यह सोचें कि हमारे पास जो भी है, वह सब परमात्मा का है। जिस परिवार के बच्चे यह सोचेंगे कि परिवार की सम्पत्ति माता-पिता की है, तो वे माता-पिता की आज्ञा का पालन करेंगे, उनके अनुसार ही सम्पत्ति का उपभोग भी करेंगे, माता-पिता की आज्ञा के बिना अनावश्यक पैसा नहीं उड़ायेंगे।

इसलिए ईश्वर कह रहा है- हे संसार के लोगो! आपको जो शरीर दिया है, सम्पत्ति दी है, सृष्टि दी है, धन-धान्य व रत्न दिए हैं, आपको जो बुद्धि दी है और बुद्धि से जो-जो आविष्कार आप कर सकते हो, वह सब मेरा है। उसे अपना समझकर अहंकार मत करना और उस अहंकार में दूसरों को तुच्छ मत समझना। अगर मुझे जानकारी हो कि यह घड़ी किसी की दी हुई है, तो मैं घड़ी को पहन करके अहंकार नहीं करूँगा। अगर मैं यह मान लूँ कि मेरे पास जो पैसा है, वह किसी का दिया हुआ है, तो मैं अहंकार नहीं करूँगा। फिर भी यदि कोई किसी दूसरे के पैसे पर अहंकार करता है, तो वह बहुत बड़ा मूर्ख व पापी है।

किसी से कर्ज ले लिया और उसी के सामने अहंकार करे, तो यह मूर्खता है, कृतघ्नता है। परमात्मा से हमने कर्ज लिया है, वह जब चाहे ले लेगा अर्थात् जब चाहे हमें दूसरी जगह पहुँचा देगा। आपको मैंने बता दिया है कि जो दिख रहा है अथवा नहीं दिख रहा है, वह क्या है। यह भी बता दिया कि यह कैसे बना है, कैसे चल रहा है और यह भी बता दिया कि आपको क्या व्यवस्था बनानी है, कैसा राजा बनाना है, कैसे गुरु से शिक्षा लेनी है। यह भी बता दिया कि तुम चेतन हो, जड़ नहीं हो, तुम अमर हो, लेकिन तुम्हारे साधन, शरीर अमर नहीं हैं, कभी भी चले जायेंगे।

अन्त में मैं बता रहा हूँ कि यह सब मेरा है, यह सब मेरा दिया हुआ है। मैं तुम्हारे अन्दर-बाहर सर्वत्र हूँ और तुम्हारे कर्मों को देख रहा हूँ। आज परमात्मा की भक्ति करने वाले बहुत पाप कर रहे हैं। धर्म के नाम पर जितना पाप हुआ है, उतना अन्य किसी के नाम पर नहीं हुआ। धर्म के नाम पर जितना खून बहा, उतना किसी अन्य कारण से बहा हो, ऐसी सम्भावना कम है। ऐसा क्यों हुआ? हम कुछ व्यक्तियों को देखते हैं कि वे बहुत ध्यान लगाते हैं, तीन-चार घण्टे बैठते हैं, फिर भी ईर्ष्या-द्वेष से भरे हुए हैं, फिर भी धन-सम्पत्ति के ढेरों पर बैठे हुए हैं, फिर भी लोगों को मूर्ख बना रहे हैं, फिर भी काम आदि में आसक्त हैं, बहुत सारे पाप कर रहे हैं। किसी के पाप कर्म दिखते हैं, किसी के नहीं दिखते हैं। ऐसा क्यों हो रहा है?

ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि उन्हें वास्तव में ईश्वर की सत्ता पर विश्वास ही नहीं है। जब वे ध्यान में बैठते है, तब उन्हें लगता है कि ईश्वर उनके साथ है और ध्यान से हटकर जब लोकव्यवहार करते हैं, तो उन्हें ईश्वर की सत्ता का आभास ही नहीं होता। इसलिए ईश्वर की पूजा करने वाला वैसा ही व्यवहार करता है, जैसा ईश्वर को नहीं मानने वाला करता है। कोई नमाज पढ़ता है, कोई चर्च में जाता है, कोई गुरुद्वारे में जाता है, कोई मन्दिर में जाता है, कोई गंगा में नहाता है, कोई रोजा रखता है, कोई व्रत रखता है, कोई संध्या व यज्ञ करता है, लेकिन क्या किसी का व्यवहार बदला? यदि कोई व्यापारी है, तो क्या वह ईमानदारी से व्यापार करता है, झूठ नहीं बोलता? यदि कर्मचारी या अधिकारी है, तो क्या वह रिश्वत नहीं लेता? यदि वह मन्त्री आदि है, तो क्या अपने कर्त्तव्यों को निभाता है? क्या जनता को मूर्ख नहीं बनाता? क्या वैज्ञानिक मूर्ख नहीं बनाते, जैसे आज बना रहे हैं? क्या मीडिया वाले झूठ नहीं बोलते? ये सभी अपने-अपने हिसाब से अपने-अपने इष्ट देव की पूजा करते हैं। जो अपने को घोर नास्तिक कहता होगा, वह भी कभी न कभी किसी कब्र पर जाकर माथा टेकता होगा। कहीं न कहीं जाकर उसका भी सिर झुकता होगा, पर वो क्षणिक होता है। काश! उसका सिर हर समय झुका रहे,

उस अदृश्य शक्ति अर्थात् ईश्वर के सामने।

ईश्वर कौन है? जिसने संसार को बनाया। वह निराकार है और कभी शरीर धारण नहीं करता। वह अजर, अमर, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान्, निर्विकार और सर्वज्ञ है। वह सूक्ष्म इलेक्ट्रॉन, प्रोटोन, क्वार्क, फोटोन में भी है, स्पेस की यूनिट्स के अन्दर भी है, वैदिक छन्द रश्मियों और प्राण रश्मियों के अन्दर भी है, मनस्तत्त्व और प्रकृति के अन्दर भी है, समूचे ब्रह्माण्ड के अन्दर-बाहर भी है और जहाँ कुछ भी नहीं है, वह वहाँ भी है। ईश्वर पूर्ण निराकार, निर्विकार, निर्लेप, सम्पूर्ण और अनन्त ज्ञानयुक्त तथा अनन्त शक्तियुक्त है। ईश्वर को हमने मन्दिरों, मस्जिदों, चर्चों, गुरुद्वारों में बाँट दिया। मन्दिरों को भी अलग-अलग श्रेणियों में बाँट दिया गया है। यहाँ का मन्दिर बड़ा है, तो आगे कहीं का छोटा है, यहाँ मस्जिद छोटी है, आगे की बड़ी है, यह गुरुद्वारा बड़ा है, वह छोटा है अथवा यह चर्च छोटा है, वेटिकन सिटी का बड़ा है, यह सब क्यों हुआ? यह सब इसलिए हुआ, क्योंकि किसी ने भी ईश्वर को नहीं जाना। जिस दिन वह इस मन्त्र पर विचार करेगा, तब वह ईश्वर को जान पायेगा और ईश्वर को सही रूप में वही जानेगा, जिसने सृष्टि को जान लिया।

यहाँ कोई प्रश्न उठा सकता है कि ईश्वर की बात बाद में की, पहले सृष्टि की बात करने लग गये, जबकि अध्यात्म सबसे पहले आवश्यक था। इसका उत्तर है कि जब तक जड़ को नहीं जानेंगे, तब तक चेतन को जान ही नहीं सकते। एक व्यक्ति मरा है या जिन्दा? यह देखने के लिए हम क्या करते हैं? क्या आत्मा को देखते हैं? आत्मा को तो देखा ही नहीं जा सकता और न ही छूआ जा सकता है। इसलिए शरीर को देखते हैं, जैसे आँखें कैसी हैं, नाड़ी चल रही है या नहीं, हृदय धड़क रहा है या नहीं? यही सब तो परीक्षण करते हैं। चिकित्सक अलग ढंग से परीक्षण करते हैं, लेकिन वे भी शरीर का ही परीक्षण करते हैं। इस प्रकार पहले किसको जाना? पहले जड़ को जाना, फिर

सिद्ध हुआ कि चेतना है या नहीं ?

यदि आप योग-साधना करना चाहते हैं वा योगी बनना चाहते हैं या ध्यान करना चाहते हैं, तो पहले सृष्टि को जानें, ऐसा यह मन्त्र बतला रहा है। इसलिए मैंने सबसे पहले इसका आधिदैविक अर्थ किया था और मैंने यह भी कहा था कि यह आधिदैविक अर्थ ही किसी भी वेदमन्त्र का स्वाभाविक और प्रथम अर्थ है। आधिदैविक के बिना आध्यात्मिक और आधिभौतिक अर्थ को समझा ही नहीं जा सकता। आध्यात्मिक सबसे बाद में आता है, लेकिन सबका मूल है। आज प्राथमिक शिक्षा में वर्णमाला सिखाई जाती है, लेकिन जब वही छात्र एम.एससी. में पहुँचता है, तो क्या सिखाया जाता है ? एम.एससी. वाली शिक्षा आध्यात्मिक है। अध्यात्म बहुत सूक्ष्म विज्ञान है। लेकिन उस सूक्ष्म विज्ञान को वे लोग नहीं समझ सकते, जो सृष्टि को नहीं समझ सकते।

लोग हमें कहते हैं कि सृष्टि विद्या में रत रहने वाले अन्धकार में डूबते हैं, वे नहीं जानते कि वेद क्या कहता है ? वेद कहता है कि जो सृष्टि को न जानकर केवल अध्यात्म में रत रहना चाहते हैं, वे और भी गहरे अन्धकार में डूबते हैं। 'अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः॥' महर्षि दयानन्द ने भी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखा- 'अपरा का फल परा है'। फल बाद में लगता है, पहले अंकुर फूटता है, फिर पौधा बनता है, फिर पेड़ बनता है और फल सबसे बाद में लगता है। यद्यपि फल सबसे महत्त्वपूर्ण है और वही हमारा प्रयोजन है, यदि नहीं, तो ऐसा होना चाहिए। इस सृष्टि को जानने का प्रयोजन भी ईश्वर को जानना होना चाहिए। लेकिन सृष्टि को जाने बिना, जो केवल ईश्वर-ईश्वर की बात करते हैं, चाहे खुदा या गॉड की बात करते हैं, वह नादानी है। पहले उसकी बनाई हुई वस्तुओं को देखिये और समझिये। सब समझाकर परमात्मा कहता है कि यह जो मैंने दिखाया है, वह सब मेरा है। मुझे खोजो, मुझे जानो और मुझे प्राप्त करो।

अगर परमात्मा पहले ही कहता कि मैं ईश्वर हूँ, मुझे जानो, तो कैसे जानेंगे ? क्या परमात्मा सामने खड़ा हो जाएगा ? अवतारवाद वाले तो कह देंगे कि खड़ा हो जायेगा और बताएगा। वह क्यों बताएगा और यदि बताएगा भी तो सृष्टि को बताएगा कि पहले इसको देखो। जैसे हम कहीं कोई मकान खरीदने जाते हैं, तो उसमें पहले देखेंगे कि कितने कमरे हैं, क्या-क्या फर्नीचर है, क्या-क्या सामान हैं, फिर पूछेंगे कि इसका मकान मालिक कौन है ? फिर मकान मालिक से बात करेंगे कि मकान बेचना है या नहीं, यदि बेचना है, तो कितने में बेचना है ? मकान देखा नहीं, तो मकान मालिक से कैसे बात करेंगे ? इसलिए इस मकान को देखो। सम्पूर्ण सृष्टि को देखो, जानो और समझो। शरीर को समझो, व्यष्टि को समझो और समझकर अन्त में यह मकान किसका है, यह जानो।

यह ब्रह्माण्डरूपी मकान किसका है ? यह मकान परमात्मा का है। यह शरीररूपी मकान किसका है ? यह जीवात्मा का है, लेकिन इसका मालिक जीवात्मा नहीं है। जीवात्मा को वह मकान किराए पर मिला है, धरोहर के रूप में मिला है, इसका भी मालिक वह ईश्वर है। इसलिए ईश्वर की बात बाद में आई है, लेकिन बाद में आई हुई बात बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। बाद में आई हुई बात फलरूप ही होती है और बाद में आई हुई बात सबसे अधिक लोक कल्याणकारी होती है। क, ख, ग सीखने वाला बालक क, ख, ग से लोक कल्याण नहीं कर सकता। क, ख, ग साधन हैं, उसको पढ़कर के उसने आगे क्या फल प्राप्त किया, कितनी विद्याएँ प्राप्त कीं, उन विद्याओं से क्या फल मिला ? उच्चतर से उच्चतम कक्षाओं वाला ज्ञान प्राप्त किया।

एक छोटा सा बालक है और क, ख, ग सीख रहा है। इस बालक में वैज्ञानिक बनने की प्रतिभा भी छुपी हुई है, साहित्यकार बनने की प्रतिभा भी छुपी है, राजा बनने की प्रतिभा भी छुपी है, लेकिन अभी नहीं बन सकता, क्योंकि यह उसका प्रारम्भिक चरण है। पूरा पढ़ लेगा तब समझ जाएगा कि

उसे क्या करना चाहिए? वैसे ही सृष्टि को समझो, पूरी तरह से जान लो, फिर देखो कि यह किसकी है? 'कस्य स्विद्धनम्' सोचो! यह धन किसका है? 'ईशावास्यमिदं सर्वम्' यह सब उस प्रजापति परमात्मा का है। प्रजापति अर्थात् जो सब प्रजा का पालन करने वाला सब प्रजा को उत्पन्न करने वाला है। यह आध्यात्मिक अर्थ हुआ। आध्यात्मिक अर्थ बाद में क्यों किया, यह भी बता दिया। अध्यात्म में पहले आत्मा को जानो, फिर परमात्मा को। पहले सृष्टि को जानो, फिर जानने वाले तुम स्वयं को जानो, फिर यह सृष्टि किसकी है, किसने बनाई है और इसे कौन चला रहा है, उसको जानो। ये सब सीढ़ियाँ हैं।

कभी हमारे देश में, सम्पूर्ण विश्व में एक धर्म था- वैदिक धर्म। उस समय कोई मजहब नहीं था। एक ही भाषा थी- वैदिक भाषा अर्थात् संस्कृत भाषा। उस समय सभी लोग सुखी थे। वे सृष्टि को, स्वयं को और परमात्मा को जानकर सारे व्यवहारों को सिद्ध करते थे। आज मैं उनसे कहना चाहूँगा, जो परमात्मा के नाम पर बहुत प्रवचन करते हैं, धर्माचार्य हैं, नाना प्रकार के ध्यान सिखाते हैं, चाहे वे किसी भी सम्प्रदाय के हों, आप अपने हृदय में झाँककर देखिये कि क्या आपको विश्वास है कि ईश्वर है?

एक व्यक्ति अंग्रेजी का अध्यापक था। उसने गले में काला धागा डाला हुआ था, मैंने पूछा कि यह क्या है? उसने कहा कि हनुमान जी का है। हनुमान जी की चर्चा बाद में करेंगे, पहले यह बताओ कि क्या ईश्वर है? तुम पूजा करते हो? हाँ, करता हूँ। तुम्हें विश्वास है कि ईश्वर है? हाँ, बिलकुल है। जब दो-चार बार पूछा कि क्या तुम्हें पूरा विश्वास है? वह बोला- हाँ, बिलकुल है, प्रतिदिन पूजा करता हूँ। पूजा तो लोग अपने-अपने ढंग से करते हैं, पर जब तुम व्यावहारिक कार्य करते हो, तब क्या यह विचार कर हर कार्य को करते हो कि ईश्वर देख रहा है? और क्या उसको याद करके गलत कार्यों से बचते हो? तब वह युवक कहने लगा कि गुरुजी, तब तो ईश्वर याद ही नहीं आता। फिर मैंने कहा कि क्या तुम्हारा ईश्वर केवल पूजा करने के लिए

ही है या अपने व्यवहार बदलने के लिए भी है? इसलिए पूजा, उपासना, योग, अन्य इबादत या प्रार्थना करने वाले यह विचार करें कि क्या उनको अन्दर से विश्वास है कि ईश्वर है? क्या वे ऐसी चेतन सत्ता को मानते हैं, जिसके लिए हर प्राणी समान है?

ईश्वर हमारे हर कर्म को देखता है, गलत कार्य को भी देखता है और उसके अनुसार दण्ड भी देता है। यदि सभी ऐसा सोचने वाले होते, तो संसार में कोई गलत कार्य होता ही नहीं। अगर चोर सदैव अपने सामने ईमानदार पुलिस वा जज को देखे, तो कोई चोर चोरी कर ही नहीं सकता। अगर पुलिस या जज भ्रष्ट हैं, तो वह चोरी करेगा ही और उनको भी खिलाएगा। आज परमात्मा को भी रिश्वत दी जाती है। लोग मन्दिर-मस्जिद-गुरुद्वारा-चर्च बनवा देंगे, प्रसाद या चादर चढ़ा देंगे, काशी, हरिद्वार या मक्का-मदीना चले जायेंगे और यह सोच कर जाते हैं कि हमारे पाप दूर हो जायेंगे, ऐसा करके आप परमात्मा को मूर्ख नहीं बना सकते, परमात्मा मूर्ख नहीं बनता। इसी प्रकार जो सोचते हैं कि ध्यान के द्वारा अथवा गायत्री मन्त्र के द्वारा पाप दूर हो जायेंगे, तो ऐसा नहीं है। परमात्मा मूर्ख नहीं है, हम स्वयं ही मूर्ख बन रहे हैं। ऐसा क्यों हो रहा है? ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि अधिकांश लोग ईश्वर को मानते हैं, पर जानते नहीं कि वह कैसा है, इसलिए पाप कर रहे हैं। मृत्यु को सब जानते हैं कि एक दिन मरना ही है, पर मानने के लिए तैयार नहीं हैं। लोग ऐसा व्यवहार नहीं करते कि हम कभी मरेंगे। इसलिए इन सबको जानने के लिए सृष्टि को जानना अनिवार्य है, अन्य कोई मार्ग वा विकल्प नहीं है।

कुछ लोग कहते हैं कि मुक्ति के लिए सृष्टि को क्यों जानना? इसका उत्तर है- अगर सृष्टि को नहीं जानेंगे, तो स्रष्टा को भी नहीं जान सकते। स्रष्टा पर विश्वास ही नहीं हो पायेगा। कोई अच्छा उपदेश कर लेता है, आँख बन्द करके ध्यान कर लेता है, लोगों के सामने दिखावा कर लेता है कि वह पूर्ण ब्रह्मवेत्ता है। वह अपने श्रद्धालुओं को और अपने अनुयायियों को तो धोखा

दे सकता है, परन्तु भीतर परमात्मा रूपी मुनि बैठा है, हम सबका मनन करने वाला, हम सबको जानने वाला, क्या हम उसको भी मूर्ख बना सकते हैं? इसलिए इस मन्त्र के भाष्य के बाद सभी विचारें कि क्या वे ईश्वर को वास्तव में मानते हैं? हर कर्म को उसकी साक्षी में करते हैं।

उपदेश देना सरल होता है, लेकिन उस उपदेश पर चलना बहुत कठिन होता है। पुस्तकें लिखना भी सरल होता है, लेकिन उस पुस्तक में जो लिखा है, वह करना कठिन होता है। लेकिन कठिन होता है, इसलिए अवश्य करणीय है। कठिन भले ही हो, पर सत्य होना चाहिए। इसलिए हम इस सृष्टि को समझें, अपने आप को समझें और ईश्वर को समझें, इन तीनों बातों को समझें और उसी प्रकार व्यवहार करें। यह सब परमात्मा ने केवल एक ही मन्त्र से समझा दिया।

मन्त्र पहले भी थे, सारी सृष्टि में गूँज रहे थे, लेकिन अग्नि ऋषि ने जो पहला वाक्य ग्रहण किया, उसको यहाँ पहला माना है। ऐसा नहीं है कि यह मन्त्र पहले उत्पन्न हुआ है, इसलिए इसको प्रथम मन्त्र कहा है। प्रथम मन्त्र का अर्थ परमात्मा ने जनाया और उन्होंने इसको ग्रहण भी परमात्मा की प्रेरणा और सहयोग से ही किया। इसलिए हमने इसको प्रथम वेद मन्त्र कहा और इस प्रथम मन्त्र ने हमें अपने पूरे जीवन का एक मार्ग बता दिया, सृष्टि को जानने का भी मार्ग बता दिया। चारों वेदों में जो मन्त्र हैं, उन सब पर इसी प्रकार की व्याख्या हो, तभी हम कह सकते हैं- 'अनन्ता वै वेदाः'। देवराज इन्द्र ने महर्षि भरद्वाज को ऐसे ही नहीं कह दिया था- 'अनन्ता वै वेदाः'। एक मन्त्र में इतना ज्ञान है, जितना मैंने बोला, केवल उतना ही नहीं, इसका और भी विस्तार हो सकता है। इसलिए वेद का ज्ञान अनन्त है और वेद मन्त्र इन चारों वेदों में नहीं, अन्यत्र भी ब्रह्माण्ड में गूँज रहे हैं। एक-एक मन्त्र असंख्य बार आवृत हो रहा है। कई दृष्टि से वेद अनन्त है। इसलिए कहा- 'अनन्ता वै वेदाः'।

हाँ, एक बात और कहनी है कि वर्तमान अपरिपक्व वैज्ञानिक व छात्र जीवात्मा व परमात्मा की सत्ता को ही नकारते हैं, तब उन्हें यह मन्त्र ही क्यों अच्छा लगेगा? इसके उत्तर में हम यहाँ इतना ही कहेंगे कि जब तक ये लोग शरीर व ब्रह्माण्ड की संरचना एवं क्रियाविज्ञान की गहराई में नहीं जायेंगे, तब तक उन्हें इन दोनों ही चेतन तत्त्वों के अस्तित्व का आभास नहीं होगा। आज विज्ञान, विशेषकर भौतिक विज्ञान अनेक अनसुलझी गम्भीर समस्याओं से ग्रस्त है, उसका कारण केवल यही है कि वह चेतन सत्ता के अस्तित्व को स्वीकार करने का साहस नहीं कर पाता। जब तक वह ऐसा नहीं करेगा, तब तक वह यूं ही भटकता रहेगा। हाँ, इस भटकाव से अनेक कथित शोधकर्त्ताओं की दुकानें अवश्य चलती रहेंगी और कोई अपनी दुकान क्यों बन्द करना चाहेगा?

ईश्वर के अस्तित्व की वैज्ञानिकता को समझने के लिए 'वेदविज्ञान-आलोकः' ग्रन्थ पठनीय है। इस मन्त्र का व्याख्यान हम यहीं समाप्त करते हैं। कल हम उन सभी महत्त्वपूर्ण शंकाओं का समाधान करेंगे, जो इस व्याख्यानमाला पर श्रोताओं की ओर से हमें प्राप्त होती रही हैं। ओम् शम्।

* * * * *

12. शंका - समाधान

ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥

प्रिय श्रोतागण! हमने पिछले 11 दिन इस मन्त्र पर व्याख्यान दिये, जिनमें हमने इस मन्त्र का तीन प्रकार का भाष्य बताया और यह भी सिद्ध किया कि यह मन्त्र चारों वेद की भूमिका कैसे है और संसार की कोई भी पुस्तक वेद की तुलना में कहीं भी नहीं ठहरती। इसलिए यदि कोई ईश्वरीय ग्रन्थ है, तो केवल और केवल वेद है। इस पर आज हम कुछ शंकाओं को लेते हैं।

मुझे प्रसन्नता है कि अनेक युवक हमसे जुड़ रहे हैं, उनके जीवन में एक परिवर्तन आ रहा है। वे वेद की ओर आ रहे हैं, वैदिक सनातन धर्म की ओर आ रहे हैं, आर्य समाज की ओर आ रहे हैं, भौतिक विज्ञान की ओर आ रहे हैं, सदाचार की ओर आ रहे हैं और वे राष्ट्र व मानवता के प्रति जागरूक भी हो रहे हैं। ऐसे हमारे अनेक उत्साही और विवेकी श्रोता है, जो किन्हीं की शंका का स्वयं समाधान भी कर देते हैं और ऐसे प्रबुद्ध व जागरूक श्रोताओं की हमें बहुत आवश्यकता है। कुछ शंकाओं का समाधान मुझे नहीं करना पड़े, तो अच्छा रहेगा, क्योंकि इससे मेरा समय बचेगा। इसमें कई लोग काम कर रहे हैं, फिर भी मैं समाधान हेतु कुछ शंकाओं को लेता हूँ।

मैंने कहा था कि शंका इस मन्त्र से सम्बन्धित हो, सम्पूर्ण रश्मि थ्योरी से नहीं, क्योंकि उनका समाधान कहीं न कहीं किसी व्याख्यान में हो जाता है। वास्तविकता यह है कि मैं सभी टिप्पणी को देख पाऊँ, यह आवश्यक नहीं है, क्योंकि मेरे पास बहुत काम हैं- संस्था चलानी, व्यवस्था देखनी, निरुक्त भाष्य करना, बहुत मुश्किल हो जाता है। फिर भी कोई बात नहीं।

शंका- कौनसी रश्मियाँ एक-दूसरे को आकर्षित करती हैं? कौनसी रश्मियाँ एक-दूसरे को प्रतिकर्षित करती हैं? और ये रश्मियाँ पृथ्वी में किस-किस पदार्थ में कितनी-कितनी मात्रा में होंगी, इस पर प्रकाश डालिए।

समाधान- कौनसी रश्मियाँ आकर्षित करती हैं और कौनसी रश्मियाँ प्रतिकर्षित करती है, इसका कोई निश्चित नियम नहीं है, क्योंकि यह सापेक्ष होता है। इसका एक नियम यह अवश्य है कि इस सृष्टि की कुछ रश्मियाँ पुरुषरूप व्यवहार करती हैं और कुछ रश्मियाँ स्त्रीरूप व्यवहार करती हैं। इन दोनों प्रकार की रश्मियों में आकर्षण होता है और समान प्रकार की रश्मियों में प्रतिकर्षण होता है, यह एक नियम है।

किस पदार्थ में कितनी रश्मियाँ हैं, यह जानना असम्भव-सा कार्य है, लेकिन इतना है कि किसी फोटोन में लगभग 360 प्रकार की रश्मियाँ होती हैं और जिनको आज मूलकण कहा जाता है, जैसे क्वार्क आदि इनमें 360 से 480 के बीच में। किसी भी मोलिक्यूल में लगभग 720 ऐसी रश्मियाँ हैं। यह एक सामान्य मात्रा है, इससे कुछ कम या अधिक भी हो सकती हैं। रश्मियाँ कितने प्रकार की हैं और किसी पदार्थ में कितनी हैं, यह जानना मनुष्य के लिए असम्भव है। हाँ, कोई योगी, जो उच्च कोटि के ऋषि स्तर के हों, वे किसी पदार्थ विशेष के बारे में जान सकते हैं। वैसे योगी नहीं, जैसे आजकल भाषण देकर आँख बन्द करके योगी बन जाते हैं।

शंका- धरती से मनुष्य के उत्पन्न होने के कितने समय पश्चात् वेद-विद्या आयी?

समाधान- जैसा कि पूर्व में बताया था कि मनुष्य युवावस्था में इस भूमि से निकला। उस समय बिना वेद ज्ञान के भी उसके ज्ञान का स्तर बहुत ऊँचा था, क्योंकि पहली पीढ़ी में वही मनुष्य उत्पन्न होते हैं, जो मुक्ति से आते हैं। इसलिए उनके ज्ञान और चरित्र का स्तर बहुत उच्च था और पहली पीढ़ी में

ही अग्नि, वायु, आदित्य व अङ्गिरा ये चारों ऋषि भी थे, उनका ज्ञान तो सर्वोच्च था। उन्होंने वेद मन्त्रों की रश्मियों को पहली पीढ़ी में ही ग्रहण किया। वेद का सम्पूर्ण ज्ञान मात्र उस पहली पीढ़ी के लिए ही नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण सृष्टि में आने वाली आगामी पीढ़ियों के लिए भी था। वेद का ज्ञान सनातन व सार्वभौमिक है और सदैव प्रासंगिक है। इस प्रकार वेद का ज्ञान उसी समय आया, जब पहली पीढ़ी उत्पन्न हुई।

शंका- भगवान् मनु धरती पर कब आए? क्या वे पहली पीढ़ी में ही धरती पर आए या कई पीढ़ियों के बाद धरती पर आए?

समाधान- जिनको स्वायम्भुव मनु कहा जाता है, वे स्वयम्भू महर्षि ब्रह्मा जी के पौत्र थे। स्वयम्भू का अर्थ अपने आप अर्थात् भूमि से उत्पन्न हुआ। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने उनको महर्षि ब्रह्मा का पौत्र कहा है।

शंका- 'सायण आचार्य और श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने अपने वेदभाष्य में गौ-मांस भक्षण का विधान किया है', लेकिन यह आपने गलत कहा है।

समाधान- आपने वेद भाष्य पढ़ा है या नहीं, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन लगता है कि आपने न तो सायण का वेद भाष्य देखा है और न ही सातवलेकर का देखा है। जब आप इनके भाष्यों को देखेंगे, तो आपको पता लग जाएगा। एक मन्त्र है -

एतद् वा उ स्वादीयो यदधिगवं
क्षीरं वा मांसं वा तदेव नाश्नीयात्। (अथर्ववेद 9.6.39)

इस मन्त्र का भाष्य दोनों ने किया है और उसमें यही लिखा है कि अतिथि से पहले गौ-मांस को नहीं लेना चाहिए, बल्कि अतिथि को खिला कर ही खावें। इसलिए पहले पढ़ें, फिर प्रश्न करें। हमारे लोगों से जो गलतियाँ हुई हैं, उनको बड़ी विनम्रता से स्वीकार करना चाहिए। ऋषि दयानन्द और इन सभी भाष्यकारों में यही अन्तर है। ऋषि दयानन्द के वेदभाष्य में कहीं भी

ऐसा नहीं मिलेगा। अन्य लोगों ने अनेकत्र रूढ़ अर्थ करके गौ-मांस का विधान कर दिया। वास्तव में रूढ़ अर्थ उन्होंने नहीं किये, बल्कि ये पहले से चले आ रहे हैं। केवल गाय का मांस खाना ही अपराध नहीं है, बल्कि किसी भी प्राणी को मारना अपराध है, किसी भी प्राणी का मांस खाना अपराध है। गौ-मांस की परम्परा अथवा किसी भी मांस की परम्परा, यह सब हमारे पूर्वजों ने अपनी अज्ञानता से सारे लोगों को सिखायी, इसका विधान वेदों में है, ऐसा कहकर। वास्तविकता यह है कि वेद में सर्वत्र सब प्राणियों से प्रीतिपूर्वक व्यवहार का ही आदेश है। वेद में हिंसा का संकेत तक नहीं है। हाँ, क्रूर हिंसक को कठोर दण्ड देने का आदेश अवश्य है।

शंका- किसी भी मन्त्र को देखकर उसका ऋषि और देवता कैसे पता चलता है?

समाधान- वेद संहिताओं में सर्वत्र ऋषि और देवताओं का नाम अंकित होता है, वह देख के पता लगा सकते हैं। मन्त्र को देखकर देवता का अनुमान हो जाता है, लेकिन ऋषि का अनुमान नहीं हो सकता। देवता उस मन्त्र का प्रतिपाद्य विषय होता है। देवता पद प्राय: वेद मन्त्र में विद्यमान होता है। कहीं-कहीं नहीं भी होता है, तब हमें अपनी ऊहा से विचारना पड़ता है।

शंका- ईश्वर ने मनुष्यों को क्यों बनाया? मानव उत्पत्ति का कारण क्या है?

समाधान- मैं मानव उत्पत्ति की बात नहीं कर रहा। यदि मैं प्राणिमात्र की उत्पत्ति की बात करूँ, तो इसमें ईश्वर का अपना कोई प्रयोजन नहीं है। सत्यार्थ प्रकाश में ऋषि दयानन्द के सामने भी यही प्रश्न आया है कि ईश्वर ने दुनिया क्यों बनाई? नहीं बनाता, तो ठीक रहता। ऋषिवर ने कहा कि आँख क्यों देखती है, क्योंकि देखना आँख का स्वभाव है। कान सुनते हैं, क्योंकि सुनना कान का स्वभाव है। अगर आँख, कान का मन व आत्मा से सम्बन्ध है, तो अवश्य देखेंगे व सुनेंगे।

अब यह प्रश्न उठता है कि आँख क्यों देख रही है ? अगर मन दूसरी जगह है, तो आँखें भी नहीं देख पायेंगी। मन पढ़ने में लगा है, तो कोई भी व्यक्ति हमारे पास आ जाए, पता नहीं लगेगा, उसके पैरों की आवाज हम नहीं सुन पायेंगे। लेकिन मन के साथ उनका जुड़ाव है, तो आँखें अवश्य देखेंगी, कान अवश्य सुनेंगे। इसी प्रकार परमात्मा का स्वभाव है- सृष्टि बनाना और जीवों की भलाई करना। अगर कोई कहे कि सृष्टि नहीं बनाता, फिर भी जीव तो मुक्त ही थे। उसे मुक्ति नहीं कहते है उसे अज्ञानावस्था कहते हैं। इसलिए जीवों के भोग और मोक्ष दोनों के लिए सृष्टि बनायी। जीव शरीर धारण करके संसार का उपभोग करे और उपभोग करके शरीर के द्वारा साधना करके मोक्ष को प्राप्त होवे, इसलिए ही सृष्टि बनायी।

शंका- वेद ईश्वरीय ज्ञान है, यह मानव को सरल और सहज ढंग से दिया जाए, तभी लाभ है, अन्यथा मानव समाज पथभ्रान्त होकर विनाश ही करेगा। मन्दिरों में नित्य सुबह-शाम संध्या के मन्त्रों के पढ़ने की परम्परा, शेष समय वेद-उपनिषद् ज्ञान एवं धर्म रक्षा हेतु शस्त्र-शास्त्र का ज्ञान देने की परम्परा यथार्थ में शुरू करवाइए।

समाधान- यह सब मेरे हाथ में नहीं है। हम लोग प्रयास कर रहे हैं और उस प्रयास से लाभ भी हो रहा है। लोग नास्तिक से आस्तिक बन रहे हैं।

शंका- पुनर्जन्म पर कुछ बताएँ। कर्मों का फल मिलता है अथवा नहीं ?

समाधान- जो भी वैज्ञानिक बुद्धि वाले हैं और कारण-कार्य के नियम को जानते हैं कि कारण-कार्य का नियम अटल है, जड़ संसार में और चेतन संसार में भी। जड़ संसार में कारण-कार्य का नियम भौतिकी के लोग मानते हैं और चेतन संसार में यही नियम कर्म-फल के सिद्धान्त के रूप में हमें दिखाई देता है। कर्मों का फल अवश्य मिलता है।

शंका- वेदों में यदि विज्ञान होता, तो मनुष्य को चाँद पर जाने में इतने साल

क्यों लग गए? अब तक तो ब्रह्माण्ड के सभी ग्रहों पर मनुष्य को पहुँच जाना चाहिए था।

समाधान- इसको कहते हैं- अनावश्यक अपने ही पूर्वजों की आलोचना करना अर्थात अपने पूर्वजों के प्रति कृतघ्नता व दूसरों की दासता की पागलपन तक पहुँच चुकी पराकाष्ठा। जो मेरे पूर्वज है, वे आपके भी हैं और जो आपके पूर्वज हैं, वे मेरे भी हैं। कुछ लोग अपने ही पूर्वजों को मूर्ख मानने में अपनी बुद्धिमानी अनुभव करते हैं। अपने ही पूर्वजों को पिछड़ा मानने में अपनी प्रगतिशीलता अनुभव करते हैं। आपने यह कैसे जान लिया कि चाँद पर पहले कोई नहीं जाता था? इतिहास सुरक्षित नहीं रहा, तो क्या हुआ। अमेरिका के वैज्ञानिक की एन्टी ग्रेविटी पुस्तक है, उसने पूरा खुलासा किया है कि भारत में किस प्रकार की विमान विद्या थी, कहाँ-कहाँ किस प्रकार से लोग जाया करते थे और कैसे-कैसे विमान थे। लेकिन आप लोग दुनिया को ढोल बजाकर बताते रहिये कि हमारे पूर्वज मूर्ख थे, क्योंकि आपने यही पढ़ा है कि हम मूर्खों और बन्दरों की सन्तान हैं। जो सभ्यता अपने को पशुओं की सन्तान मानती है, वह अपने पूर्वजों को बुद्धिमान् कैसे मान लेगी?

शंका- ग्रेविटी एनर्जी है या फोर्स है?

समाधान- ग्रेविटी फोर्स है, लेकिन जिसमें एनर्जी होगी, वही फोर्स लगा पायेगा। दोनों का परस्पर एक दूसरे से सम्बन्ध है।

शंका- ईश्वर कैसे उत्पन्न हुआ?

समाधान- संसार में कुछ पदार्थ ऐसे भी होते हैं, जो कभी उत्पन्न नहीं होते, वे दूसरों को उत्पन्न करते हैं। ईश्वर कभी उत्पन्न नहीं होता। प्रकृति पदार्थ, जिससे यह सृष्टि बनी है, वह भी कभी उत्पन्न नहीं होता और हम जीवात्मा भी कभी उत्पन्न नहीं होते, शरीर उत्पन्न होता है। कौनसा उत्पन्न होता है और कौनसा नहीं, इस बारे में हम कई बार बता चुके हैं। जो पदार्थ किन्हीं अवयवों

से मिलकर न बना हो, वह अनादि हो सकता है और जो पदार्थ किसी से मिलकर बना हो, वह अनादि नहीं हो सकता। सृष्टि सूक्ष्म अवयवों से मिलकर बनी है, इसलिए कभी न कभी बनी है। न ईश्वर सूक्ष्म अवयवों से मिलकर बना है, न मूल पदार्थ सूक्ष्म अवयवों का संयुक्त रूप है और न ही जीवात्मा। इसलिए ईश्वर उत्पन्न नहीं होता।

शंका– ब्रह्माण्ड का अन्त कब होगा? क्या ईश्वर ब्रह्माण्ड की रचना करते हैं?

समाधान– हाँ, जिस प्रक्रिया से यह सृष्टि बनी है या बनती है, उसी का उल्टा रूप या उन्हीं रिवर्स स्टेप्स के द्वारा इसका प्रलय भी होता है। जैसे कोई मकान एक-एक ईंट चिन कर बनता है और एक-एक ईंट निकालकर वह मकान बिखर भी जाएगा, वैसा ही होता है। सृष्टि, फिर प्रलय, फिर सृष्टि और फिर प्रलय, यह चक्र अनादि व अनन्त है। हाँ, ईश्वर ही इस सृष्टि का रचयिता, संचालक व प्रलयकर्त्ता है।

शंका– प्रकाश की प्रकृति कणरूप होती है या तरंगरूप? अगर गुरुत्वाकर्षण बल गतिज ऊर्जा से आता है, तो ऊर्जा पृथिवी के घूमने से आती है। पृथिवी कैसे घूमती है?

समाधान– प्रकाश, कण व तरंग दोनों रूपों में होता है। जब यह आकाश में गमन करता है, तो फैला हुआ चलता है अर्थात् तरंगरूप में और जैसे ही किसी से संयुक्त होता है, जैसे किसी इलेक्ट्रॉन पर गिरता है, तो वह सारा पदार्थ कणरूप में बदल जाता है और उसमें प्रविष्ट हो जाता है और उसमें मिल जाता है। जब वापिस निकलता है, तो कण जैसा ही बन कर निकलता है और फिर आकाश में आते ही बिखर कर एक तरंग का रूप धारण कर लेता है। गुरुत्वाकर्षण बल गति से आता है, यह सिद्धान्त नहीं है। हाँ, रश्मियाँ सदैव गतिशील ही होती हैं और उन्हीं के कारण कोई बल उत्पन्न होता है, यह

सत्य है। कोई भी कण हो या ग्रह, उपग्रह या तारे सभी घूमते हैं और इनके घूमने के पीछे अनेक प्रकार वैदिक रश्मियों की मूल भूमिका होती है। इसके विषय में हमारे 'वेदविज्ञान-आलोकः' से ही पता लगेगा।

शंका- मैं प्रतिदिन टी.वी. पर देखता हूँ, सब इतिहास की बात करते हैं, लेकिन आर्य समाज के किसी भी व्यक्ति की कोई बात नहीं होती, जबकि आर्य समाज में बहुत से क्रान्तिकारी हुए।

समाधान- यह बहुत ही दुर्भाग्य की बात है कि हमारी सत्ता ऐसे लोगों के हाथ में चली गई, जो मात्र शरीर से ही भारतीय थे और शिक्षा पद्धति भी उन्हीं की आ गई। दुर्भाग्य से आज भी आर्य समाज और ऋषि दयानन्द को याद करने वाला कोई नहीं है। जो अपने को राष्ट्रवादी कहते हैं, उन्हें यह भी पता नहीं है कि राष्ट्रवाद की यथार्थ परिभाषा क्या है? वे यह भी जानने का प्रयास नहीं करते कि राष्ट्र को स्वतन्त्र किसने कराया? यह दुर्भाग्य की बात है और यह आर्य समाज की ही कमी है। वे भी ऋषि दयानन्द के आदर्शों पर कहाँ चल पाए। वे स्वयं ही नहीं चलेंगे, तो उनको सम्मान कौन देगा? ये वर्तमान राष्ट्रवादी लोग इस राष्ट्र के प्राचीन इतिहास, विज्ञान व संस्कृति से सर्वथा अनभिज्ञ हैं, परन्तु मात्र मध्यकालीन भारत की परम्परा के स्वल्प ज्ञान के बल पर स्वयं को भारत का निर्माता समझने लगे हैं। ऐसे लोगों से भारत के दूरगामी विनाश की पूरी आशंका है। ईश्वर इन्हें सद्बुद्धि दे।

शंका- इलेक्ट्रॉन में आवेश की न्यूनतम मात्रा होती है, परन्तु यह कैसे उत्पन्न होता है, यह आधुनिक भौतिकी में नहीं आता।

समाधान- इलेक्ट्रॉन में भी आवेश की न्यूनतम मात्रा नहीं है, इलेक्ट्रॉन से भी कम मात्रा में आवेश होता है। क्वार्क में इलेक्ट्रॉन का 1/3 वा 2/3 मात्रा में आवेश होता है। इसलिए यह न्यूनतम मात्रा नहीं है। हाँ, वर्तमान में इसको कोई नहीं जानता, लेकिन वैदिक भौतिकी में इसको विस्तार से बताया गया है

कि आवेश क्या है और यह कैसे उत्पन्न होता है ?

शंका– क्या रश्मियों का अलग–अलग तापमान होता है ? क्या हम कभी उनकी गति, वेग, त्वरण आदि की गणना कर पायेंगे ? उनकी लम्बाई कितनी होती है ? सृष्टि में इनकी कुछ मात्रा है, इसलिए गणितीय व्यवहार होते हैं, उसके बिना आप गहराई से कैसे समझाओगे ?

समाधान– पहले तो यह समझना होगा कि तापमान क्या होता है ? किन्हीं पदार्थों की हलचल ही तापमान है वा ऊष्मा का रूप है। हलचल करने वाली रश्मियाँ ही होती हैं और जहाँ रश्मियाँ हैं, वहाँ तापमान भी होगा, भले ही हम उसे न माप सकें। वह शून्य डिग्री केल्विन नहीं होगा, इससे भी कम होगा। रही बात गणित की, अगर आप गणित जानते हैं, तो हमारी पुस्तक पढ़ें और उस पर गणित लागू करके देखें। एक नवीन गणित विकसित करें। एक व्यक्ति सब काम नहीं कर सकता। जिनका विषय गणित है, जो अच्छे गणितज्ञ हैं, वे हमारे साथ आएँ, उनका स्वागत है। केवल सलाह देने से काम नहीं चलेगा, आपको भी कुछ करना होगा।

शंका– अलग–अलग पदार्थों में रश्मियों की बहुलता वा न्यूनता कैसे होती है ?

समाधान– बहुलता वा न्यूनता प्रयोजन के अनुसार होती है। अगर मैं पूछूँ कि गेहूँ या चावल में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अलग क्यों होती है ? तो इसका कोई उत्तर नहीं है। इनकी रचना करने वाले का विशेष प्रयोजन होता है, इसलिए होती है। सारी रचना ईश्वर ने प्रयोजन के अनुसार ही की है और उसी के सानिध्य में यह सारा काम 'ओम्' रश्मियों के द्वारा हो रहा है। विज्ञानपूर्वक जिसमें बहुलता की आवश्यकता होती है, उसमें बहुलता होती है और जिसमें न्यूनता की आवश्यकता होती है, तो उसमें न्यूनता होती है। इसको व्याख्यात नहीं किया जा सकता।

शंका- क्या ईश्वर के अलावा प्रकृति के हर एक पदार्थ का भी अपना एक मनस्तत्त्व होता है, चाहे वह वस्तु सजीव हो या निर्जीव।

समाधान- मनस्तत्त्व सब में होता है। हमारे शरीर के अन्त:करण में एक भाग के रूप में मनस्तत्त्व होता है, वह सत्त्व गुण प्रधान होता है और जो मनस्तत्त्व इस सृष्टि के निर्माण में काम आता है, वह तमोगुण प्रधान होता है, लेकिन मनस्तत्त्व होता सब जगह है। यहाँ ब्रह्माण्ड में भी और ब्रह्माण्ड के बाहर भी।

शंका- सृष्टि के आरम्भ में क्या हम स्वतन्त्र या मुक्त थे?

समाधान- हम मुक्त नहीं थे। हम ऐसे थे, जैसे कि एक पागल व्यक्ति कहीं भी पड़ा रहता है, उसको ज्ञान नहीं होता, उसे कोई चिन्ता नहीं होती, लेकिन वह सुखी नहीं है। इसको सुखी नहीं कहा जा सकता। मुक्ति अवस्था उसे कहा जाता है, जो ज्ञान की अवस्था है और जो किसी कर्म-फल के बन्धन में नहीं है। इसलिए ईश्वर ने मनुष्य की मुक्ति के लिए सृष्टि बनाई।

शंका- क्या परमात्मा सृष्टि रचना के आरम्भ में परा 'ओम्' रश्मियों को सम्पूर्ण प्रकृति में एक साथ उत्पन्न करते हैं?

समाधान- जितना ब्रह्माण्ड है, उससे परे जहाँ भी प्रकृति है, वहाँ परा 'ओम्' रश्मियाँ हो सकती हैं। जितना ब्रह्माण्ड है, केवल उसके अन्दर ही परा 'ओम्' रश्मियाँ नहीं हैं, उसके बाहर भी हैं, यह मुख्य कहना है। लेकिन पश्यन्ती रश्मियाँ वहीं हैं, जहाँ मन है।

शंका- शब्द आकाश का गुण है, पर आप कहते हैं कि शब्द पदार्थ है।

समाधान- वैशेषिक दर्शन पढ़कर देखें। क्रिया, गुण और द्रव्य तीनों को ही पदार्थ कहा जाता है और हम जहाँ शब्द को पदार्थ कहते हैं, वास्तव में वह हलचल करता हुआ मनस्तत्त्व होता है, वही रश्मि होता है और उसका गुण शब्द है। आकाश स्वयं रश्मियों से मिलकर बना है। जैसे प्रकाश अग्नि का

गुण है और अग्नि एक पदार्थ है, वैसे ही शब्द उन तरंगों का गुण है, जो आकाश में कम्पित हो रही हैं, जो मनस्तत्त्व में हैं। शब्द मध्यमा ध्वनि का ही आधार है। वैखरी और मध्यमा आकाश का गुण है। परा और पश्यन्ती आकाश का गुण नहीं है।

शंका- क्या पृथिवी के घूमने का कारण भी 'ओम्' रश्मियाँ हैं?

समाधान- सीधे तो नहीं, लेकिन मूल रूप से 'ओम्' रश्मियाँ ही इसका कारण हैं और भी बहुत सारी रश्मियाँ हैं। धनञ्जय एवं दिक् रूपी अर्थात् दिशा रूपी रश्मियाँ भी कारण होती हैं, लेकिन 'ओम्' रश्मियाँ मूल रूप से कारण हैं, क्योंकि 'ओम्' अन्य सभी रश्मियों को भी सक्रिय करती हैं।

शंका- नासा द्वारा सूर्य की आवाज सुनी गई, जो लगभग 'ओम्' की ध्वनि जैसी है, क्या प्रकाश की भी ध्वनि होती है?

समाधान- हर पदार्थ में से ध्वनियाँ निकल रही हैं। प्रकाश स्वयं पश्यन्ती एवं परा ध्वनि तरंगों का ही संघनित रूप है, लेकिन वैखरी ध्वनि का नहीं। प्रकाश का अर्थ प्रकाश के कण हैं।

शंका- क्या वेद मे इतिहास भी है?

समाधान- वेदों में कोई भी मानवीय इतिहास नहीं है। वेदों में कहीं परीक्षित, अर्जुन, कृष्ण आदि शब्द आ गये, इसका अर्थ यह नहीं है कि वेदों में इतिहास हो गया। वेद में से शब्दों को लेकर लोगों ने अपने नाम रखे, क्योंकि उन्होंने भाषा भी वेद से सीखी और ज्ञान भी वेद से सीखा। इसलिए वेदों से हमारे पूर्वजों ने नाम ग्रहण किये, इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि वेद में हमारे पूर्वजों का इतिहास है। वेद में किसी ऐतिहासिक व्यक्ति का नाम नहीं, किसी देश का नाम नहीं, किसी नदी का नाम नहीं, बल्कि इनके नाम हमने वेदों से रखे।

शंका- क्या न्यूटन से पहले किसी ने गति के नियम दिए?

समाधान- वैशेषिक दर्शन और वेद पढ़ो। वैदिक विज्ञान सैद्धान्तिक भौतिकी के क्षेत्र में बहुत विस्तृत है।

शंका- जब वेद में केवल 20379 मन्त्र हैं, तब वेदों में अनन्त ज्ञान कैसे हुआ?

समाधान- वेद के एक मन्त्र में कितना ज्ञान हो सकता है, यह इस मन्त्र के भाष्य से पता ही चल जाता है। यदि इसी शैली से सभी मन्त्रों का व्याख्यान होगा, तो उस ज्ञान को क्या कहा जाएगा और मैंने जो भाष्य किया, वह भी पूर्ण नहीं है, इसकी और भी व्याख्या की जा सकती है। दूसरी बात देवराज इन्द्र ने महर्षि भरद्वाज से कहा था- 'अनन्ता वै वेदा:' अर्थात् वेद की रश्मियाँ ब्रह्माण्ड में अनन्त हैं। गायत्री मन्त्र एक है, उसके अर्थ अनेक हैं। वेदों में गायत्री मन्त्र चार बार आया है, लेकिन सृष्टि में अनन्त बार कम्पित होता है। इसलिए कहा- 'अनन्ता वै वेदा:'। वैसे ही वेद मन्त्र रूपी अन्य रश्मियाँ भी ब्रह्माण्ड में अनन्त हैं।

शंका- हिरण्यगर्भ क्या है?

समाधान- आजकल जिसको कॉस्मिक क्लाउड कहा जाता है, उसको हिरण्यगर्भ कहते हैं, जिससे आगे चलकर सौर मण्डल आदि की उत्पत्ति होती है। हिरण्यगर्भ अर्थात् चमकीला अण्डाकार पदार्थ।

शंका- ईश्वर की प्रार्थना न करें, तो क्या होगा? क्या उससे ईश्वर नाराज होगा?

समाधान- ईश्वर न तो प्रार्थना करने से खुश होता और न ही ईश्वर प्रार्थना नहीं करने से नाराज होता, क्योंकि वह ऐसा नहीं है। हम ईश्वर की प्रार्थना नहीं करेंगे, तो धीरे-धीरे उसे भूल जायेंगे और भूल जायेंगे, तो उच्छृंखल बन जायेंगे। उच्छृंखल बन गये, तो गलत काम भी करेंगे और गलत काम करेंगे, तो दु:ख पायेंगे और फिर अलगे जन्म में उनका फल भोगना पड़ेगा। ईश्वर

की उपासना न करने वाला अगर अच्छे काम करता है और ईश्वर की उपासना करने वाला बुरे काम करता है, तो ईश्वर की उपासना न करने वाला अधिक अच्छा है। उसको अच्छा फल मिलेगा। उपासना का कोई परिणाम होना चाहिए, तभी उपासना काम की है, अन्यथा नहीं।

शंका- हमें किस प्रकाशन वा लेखक का वेद अध्ययन करना चाहिए?

समाधान- यह मेरे सामने भी बहुत बड़ी चुनौती है। अगर कुछ पढ़ सको, तो महर्षि दयानन्द का वेदभाष्य पढ़ो। दूसरे भाष्यों में कई जगह भ्रम हैं, उनमें अच्छाइयाँ कुछ एक मिलेंगी, बुराइयाँ अनेक मिलेंगी। मैं विवश हूँ, मुझे अवसर मिला, तो मैं स्वयं करने का प्रयास करूँगा। यदि आप मेरी मानें, तो अभी वेदभाष्य मत पढ़िए, बल्कि पहले महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका और सत्यार्थ प्रकाश पढ़िए।

शंका- अग्नि का क्या अर्थ है? क्या फायर ही अग्नि है?

समाधान- नहीं, ऐसा नहीं है। फायर भी अग्नि है, लेकिन अग्नि और भी है। सभी क्वाण्टा, मूल कणों को अग्नि कहा जाता है। सभी प्रकार की ऊर्जा अग्नि के अन्तर्गत ही आती है।

शंका- यह मन्त्र ही प्रथम क्यों है? स्पन्दन तो हो ही रहा था, जिसमें पहले मन्त्र के साथ बाकी मन्त्र भी विद्यमान थे। क्या ऋषि ने अर्थ के अनुसार स्वयं ही इसको पहले लिख दिया?

समाधान- हाँ, सही है। ऋषियों ने इसी मन्त्र को पहले ग्रहण किया। ब्रह्माण्ड में अनेक मन्त्र थे, लेकिन ऋषियों ने इसी मन्त्र को ग्रहण किया, इसलिए यह प्रथम है।

शंका- क्या वेद में दलितों व स्त्री के प्रति घृणा है?

समाधान- वेद मानवमात्र के लिए हैं। जो कहते हैं कि वेद किसी के भी प्रति

घृणा उत्पन्न करते हैं, वे वेद को नहीं समझते। महिलाओं की पूजा इस देश में ही होती है। किसी भी देश में महिला के नाम के पीछे देवी नहीं लगता है, यह केवल भारत में हिन्दुओं में ही लगता है। जो हमें स्त्री के अधिकार का पाठ पढ़ाते हैं, वे पहले अपनी सभ्यता को देखें। वे तो नारी में आत्मा ही नहीं मानते थे। उनके यहाँ महिलाओं को वोट देने के अधिकार भी नहीं थे। भारत में पहले राजा के सिंहासन के पास ही रानी का सिंहासन होता था। युद्ध में महिलाएँ साथ में जाया करती थीं, साथ पढ़ा करती थीं और शोध किया करती थीं।

ऐसा बताने वाले उपदेशक कहाँ से आ गए? वेद में तो कोई दलित शब्द है ही नहीं। शूद्र श्रमिक को कहा गया है। श्रमिक हो चाहे पूंजीपति, विद्वान् हो या राजा, वेद में सबको समान अधिकार है। अगर कोई श्रमिक इतना बुद्धिमान् है कि वेद पढ़ सकता है, तो उसे अवश्य पढ़ना चाहिए। वेद स्वयं कहता है- 'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य:', इस मन्त्र में कहा है- शूद्र अति शूद्र अर्थात् श्रमिक और उससे भी नीचे सबके लिए वेद का उपदेश करो। जब वेद स्वयं कहता है कि सबको पढ़ना चाहिए, तो यह कहने वाला दूसरा अधिकारी कौन होता है कि किसको पढ़ना चाहिए और किसको नहीं।

शंका- क्या हर वस्तु का प्रभाव इस सृष्टि में पड़ता है?

समाधान- हाँ, हर वस्तु का प्रभाव पड़ता है। मैं बोल रहा हूँ, मेरी ध्वनि तरंगों का भी प्रभाव पड़ेगा। मैं झूठ बोलूँगा, तो उसका भी प्रभाव पड़ेगा। मैं सत्य बोलूँगा, तो उसका भी प्रभाव पड़ेगा। अच्छा या बुरा, हर वस्तु का प्रभाव रहता है।

शंका- 'ओम्' शब्द ईश्वर में है, इसलिए वह ईश्वर का मुख्य नाम है, तो यह शब्द ईश्वर में कैसे है?

समाधान- ईश्वर सब जगह है और 'ओम्' रश्मि ईश्वर द्वारा नियन्त्रित होती है, इसलिए ईश्वर में कहा है। यही एक रश्मि है, जिसका जुड़ाव सीधे ईश्वर से है। इसलिए ईश्वर का मुख्य नाम 'ओम्' है।

शंका- मानव सीधा इसी मनुष्य के रूप में अवतरित हुआ है या धीरे-धीरे?

समाधान- धीरे-धीरे। विकास का अर्थ यह है कि सबसे पहले दूसरे जीव आए और अन्त में मानव आया, यही विकास है। लेकिन यह विकास नहीं है कि अमीबा से धीरे-धीरे या बन्दर से मनुष्य उत्पन्न हुए।

शंका- वेद में अन्य गेलेक्सियों के बारे में क्या कहा है?

समाधान- वेद में ऐसा कहा गया है कि अनन्त ब्रह्माण्ड में अनेक तारामण्डल और अनेक प्रकार के असंख्य सूर्य हैं, ।

शंका- मन्त्र में रथ का उदाहरण दिया गया है। क्या सृष्टि के प्रारम्भ में रथ थे?

समाधान- प्रारम्भ में रथ नहीं थे, लेकिन रथों के बनाने का विज्ञान वेद में दिया गया है। तभी तो मनुष्य ने रथ बनाना सीखा, विमान बनाना सीखा। सृष्टि में वज्र रश्मियों को रथ कहते हैं। वेद में विमान बनाने की भी चर्चा है। मनुष्य ने जब विमान बनाया, तो उसका नाम भी रथ रखा, क्योंकि वज्र रश्मियाँ तेजी से चलती हैं और रथ भी तेजी से चलता है, इसलिए उन्होंने उसका नाम भी रथ रख लिया।

शंका- वेदों में कैसे-कैसे बताया गया है अर्थात् सब घुमा-घुमा कर बताया गया है। इसलिए समझना मुश्किल हो रहा है।

समाधान- वास्तव में सब वेदभाष्य ऐसे हैं कि वे स्पष्ट नहीं हैं, संक्षेप में हैं और ऋषि दयानन्द का भाष्य भी बहुत संक्षेप में है, इसलिए मुश्किल तो होगा। वेद इतना सरल भी नहीं है कि कोई भी समझ ले। उसके लिए बहुत तैयारी

करनी पड़ती है, बहुत पढ़ना पड़ता है, इसके साथ ईश्वरप्रदत्त प्रज्ञा, साधना व प्रभुकृपा भी अनिवार्य है।

शंका– आपने व्याख्यान में कहा कि सृष्टि के प्रारम्भ में चार ऋषियों ने वेद मन्त्रों को ग्रहण किया, उनके बाद यह परम्परा समाप्त हो गई, सिर्फ थोड़े बहुत ऋषियों ने ही ऐसा किया। तो भगवान् श्रीराम, भगवान् श्रीकृष्ण, देवर्षि नारद, महर्षि वेदव्यास, महर्षि परशुराम, महर्षि याज्ञवल्क्य जैसे योगी वैज्ञानिक, यह जानने के बाद बावजूद भी कि वेदमन्त्र फ्रिक्वेन्सी व वाइब्रेशन के रूप में हर जगह हैं और उन्हें ध्वनि रूप में ग्रहण किया जा सकता है, मन्त्रों को ग्रहण नहीं कर पाए, तो इसका कारण क्या रहा होगा?

समाधान– पहली बात तो यह है कि अग्नि, वायु, आदित्य व अङ्गिरा ने बहुत कुछ ग्रहण कर लिया था, इसके बाद कुछ ग्रहण करने की आवश्यकता ही नहीं थी, गुरु–शिष्य परम्परा चल पड़ी थी। आगे जिन–जिन ऋषियों ने मन्त्रों को ग्रहण किया है, उन्होंने ब्राह्मण ग्रन्थों व श्रौत सूत्रों में उन मन्त्रों को दिया है। अब इन्होंने ग्रहण किया या नहीं किया इसके विषय में कुछ कह नहीं सकते, क्योंकि वर्तमान में भगवान् श्रीराम व श्रीकृष्ण का लिखा हुआ कोई ग्रन्थ नहीं मिलता। भगवान् श्रीकृष्ण की साम्बपञ्चिका, जिसे पण्डित भगवद्दत्त ने उद्धृत किया है, वह मिलती है। देवर्षि नारद का कोई ग्रन्थ नहीं मिलता है। नारद संहिता नाम का एक ग्रन्थ है, लेकिन उसमें क्या–क्या है, मैंने वह नहीं देखा। याज्ञवल्क्य ऋषि ने शतपथ ब्राह्मण लिखा था, उसमें भी कुछ ऐसे मन्त्र हो सकते हैं, जो उन्होंने ग्रहण किये। यह आवश्यक नहीं सभी ग्रहण करें।

शंका– जब महर्षि पतञ्जलि ने योगदर्शन को वेद से सीखा, तो पहले अग्नि, वायु, आदित्य व अङ्गिरा ऋषि को समाधि अवस्था में योग का कैसे पता चला?

समाधान– ऐसा नहीं है कि योगदर्शन से पहले कोई योग नहीं जानता था।

योग विद्या तो वेद में पहले से ही है। वेद से ही पतञ्जलि ने सीखी और दूसरों ने भी सीखी।

शंका- जब ईश्वर की प्रार्थना आदि अच्छे कर्म करता हूँ, तो लोग कहते हैं कि यह सब पागलपन क्यों करते हो? मुझे मेरे मार्ग में खड़े दुर्व्यसनों को छोड़े एक वर्ष हो गया है, लेकिन अब मैं धर्मपथ पर आगे बढ़ना चाहता हूँ। ऐसी स्थिति में क्या करूँ?

समाधान- आज समय ऐसा है कि जो व्यक्ति अच्छे मार्ग पर चलेगा, उसे लोग पागल ही कहेंगे, क्योंकि पागलखाने में जो पागल लोग रहते हैं, वे अच्छे लोगों को पागल ही समझते हैं। एक सेठ पागलखाने को देखने गए कि वहाँ कैसी व्यवस्था है? लेकिन वहाँ कुछ पागल बैठे थे, वे सेठ को देखकर जोर-जोर से बोलने लगे, देखो, एक और पागल आ गया। हमारे साथ भी वैसी ही स्थिति है और संसार की भी। किसी की चिन्ता न करते हुए आगे बढ़ते रहिए। कभी समय आएगा कि जो आज पागल कहते हैं, वे तुम्हारे पीछे आयेंगे।

शंका- चार ऋषियों ने वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और वे चार ही सबसे बुद्धिमान् हुए। आपने बताया कि उन्होंने पिछले अर्थात् इस सृष्टि की रचना से पूर्व जो सृष्टि हुई थी, उस समय के कर्मों के आधार पर ज्ञान प्राप्त किया, लेकिन उनसे पूर्व जो सर्वप्रथम सृष्टि रचना हुई, उस समय किसने ज्ञान प्राप्त किया?

समाधान- सर्वप्रथम कोई सृष्टि रचना नहीं है। सृष्टि रचना और प्रलय का क्रम अनादि व अनन्त है, इसलिए जिस प्रकार दिन पहले या रात, इसका कोई उत्तर नहीं होता, उसी प्रकार कोई भी सृष्टि पहली सृष्टि नहीं कही जा सकती और कोई भी प्रलय अन्तिम प्रलय नहीं कही जा सकती। यह अनादि है, सत्य है।

शंका- महाप्रलय अवस्था में जीवात्मा कहाँ रहता है? प्रकृति के अन्दर या

परमात्मा में ? अगर प्रकृति में नहीं, तो उसके सम्पर्क में कैसे रहता है ? रश्मि गति करती है या एक जगह कम्पन करती है। धनञ्जय रश्मि के बारे में बताइए।

समाधान- जीवात्मा प्रकृति को छोड़कर के कहीं नहीं जा सकता, लेकिन मुक्त आत्मा, जो परमात्मा में रहते हैं, उनका सम्पर्क परमात्मा से भी होता है। जो मुक्त नहीं होते, उनका सम्पर्क परमात्मा से नहीं होता, क्योंकि प्रकृति स्वयं परमात्मा में होती है। इस बारे में 'वेदविज्ञान-आलोकः कक्षा' की वीडियो देखें।

शंका- मुस्लिम कुरान को मानते हैं, वेद को नहीं। हिन्दू वेद को मानते हैं, कुरान को नहीं। ईसाई बाइबिल को मानते हैं, वेद व कुरान को नहीं। तो किस ग्रन्थ पर विश्वास किया जाए ? अगर मैं हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध व जैन नहीं हूँ।

समाधान- सबके ग्रन्थ पढ़ लो। मैंने एक वेद मन्त्र का भाष्य किया है। कुरान की पहली आयत पढ़ लेना, बाइबिल की भी पढ़ लेना, ऐसे ही अन्य ग्रन्थों की भी पढ़ लेना, फिर अपने आत्मा व बुद्धि से विचार करना कि कौनसा ग्रन्थ सही है। मैं कहूँगा कि वेद सही है, तो लोग कहेंगे कि अपना-अपना ग्रन्थ तो सब सही ही बताते हैं, इसलिए सबकी दो-दो लाइन पढ़के पता चल जाएगा। यहाँ तो मैंने एक मन्त्र की ही व्याख्या की है। मैं सारे मन्त्रों की व्याख्या करके भी बता सकता था, लेकिन एक मन्त्र से ही मालूम पड़ जाएगा। जब खिचड़ी बनाते हैं, तो सारे चावल नहीं देखते हैं, केवल एक चावल देखकर पता करते हैं कि चावल पके हैं या नहीं ?

शंका- सृष्टि की पहली चार पीढ़ियों में ऋषियों के अलावा बाकी सबको क्या इस मन्त्र का ज्ञान था ? अगर नहीं, तो उन्होंने अपने गुरु कैसे खोजे ?

समाधान- वेद केवल पहली पीढ़ी के मनुष्यों के लिए नहीं हैं, इसलिए उन्होंने

पहले मन्त्र को सुनकर ही नहीं जाना कि वे कैसे गुरु को खोजें, वे तो वैसे भी जानते थे। वे मुक्ति से आए थे, उनके ज्ञान व चरित्र का स्तर बहुत ही उच्च था। यह ज्ञान तो उनके बाद वाली सभी पीढ़ियों के लिए है। जो नहीं जानते थे, उन्होंने महर्षि ब्रह्मा से सीखा और महर्षि ब्रह्मा ने चार ऋषियों से सीखा था।

* * * * *

विनम्र निवेदन

मान्यवर! आपने आचार्य जी के कार्य और महत्ता को भली प्रकार समझ लिया होगा, ऐसी आशा करते हैं। यदि आपके हृदय और मस्तिष्क वेद के इस अपूर्व कार्य के लिए उत्सुक हुए हों और हमें अपना सहयोग करना चाहें, तो आप हमारे यज्ञ में निम्न प्रकार से सहयोगी बन सकते हैं-

1. प्रतिवर्ष न्यूनतम 12,000/- रुपये दान करके ट्रस्ट के **सहयोगी संरक्षक** बन सकते हैं अथवा एक बार न्यूनतम एक लाख रुपये का दान करके आजीवन **सहयोगी संरक्षक** बन सकते हैं।
2. प्रतिवर्ष न्यूनतम 6,000/- रुपये देकर **विशेष आमन्त्रित सदस्य** बन सकते हैं अथवा एक साथ न्यूनतम 50,000/- रूपये देकर **विशेष आमन्त्रित सदस्य** बन सकते हैं।
3. वार्षिक न्यूनतम 1,000/- रुपये देते रहकर **सहयोगी सदस्य** बन सकते हैं।

नोट- उपर्युक्त सभी सहयोगी महानुभावों को न्यास की सी.ए. द्वारा की हुई वार्षिक ऑडिट रिपोर्ट भेजी जाया करेगी। जो महानुभाव स्वयं दान नहीं कर सकें, वे दूसरों को प्रेरित करके कम से कम 8 सदस्य आदि बनाकर स्वयं नि:शुल्क उसी श्रेणी के सदस्य वा सहयोगी संरक्षक आदि बन सकते हैं।

4. वयोवृद्ध विद्वान्, संन्यासी, साधु, महान् वैज्ञानिक महानुभाव अपना आशीर्वाद तथा बौद्धिक सहयोग दे सकते हैं।
5. विद्यार्थी, किसान, श्रमिक, व्यापारी आदि अपनी पवित्र आहुति श्रद्धा व सामर्थ्य के अनुसार प्रदान कर सकते हैं।

* * * * *

विशेष निवेदन

यह कार्य अत्यन्त पवित्र है, इस कारण आचार्य श्री की भावनानुसार विनम्र निवेदन है कि जिनकी आजीविका किसी भी प्रकार की हिंसा, चोरी, तस्करी, अश्लीलतावर्धक साधनों, नशीली वस्तुओं की बिक्री, धोखाधड़ी, शोषण आदि पर निर्भर हो तथा जो निर्धन भाई अपने सामर्थ्य से अधिक (अथवा अपने परिवार में क्लेश करके) दान देना चाहते हों, ऐसे महानुभावों की सद्भावना का धन्यवाद करते हुए भी हम उनका दान लेने में असमर्थ हैं। कृपया ऐसा करने का प्रस्ताव करके हमें लज्जित न करें। हाँ, जो बन्धु ऐसे कर्मों को त्यागकर हमसे जुड़ना चाहें, तो उनका हार्दिक स्वागत है। संस्थान के संचालन हेतु कृपया इन दो खातों मे दान कर सकते हैं–

Bank Name	**Punjab National Bank**
A/c Holder	Shri Vaidic Swasti Pantha Nyas
A/c Number	4474000100005849
Branch	Bhinmal
IFS Code	PUNB0447400

या

Bank Name	**State Bank of India**
A/c Holder	Shri Vaidic Swasti Pantha Nyas
A/c Number	61001839825
Branch	Khari Road, Bhinmal
IFS Code	SBIN0031180

ज्ञातव्य है कि वैदिक विज्ञान के अग्रिम एवं उच्च स्तरीय विशाल शोध संस्थान हेतु 30 बीघा भूमि सिरोही (राजस्थान) नगर से राष्ट्रीय राजमार्ग– 62 से लगभग सवा कि.मी. दूर पालड़ी (एम) राजस्व ग्राम में क्रय कर ली गई है। इस संस्थान के निर्माण का अनुमानित बजट 10 करोड़ रुपये है। जो महानुभाव इस

महान् यज्ञ में अपनी पवित्र आहुति (बड़ी राशि) देना चाहते हैं, वे निम्नलिखित खाते में धन भेज सकते हैं-

Bank Name	**Axis Bank**
A/c Holder	Shri Vaidic Swasti Pantha Nyas
A/c Number	921010017739651
Branch	Bhinmal
IFS Code	UTIB0003757

आप अपना चैक/ड्राफ्ट/धनादेश, **'श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास'** PAN No. AAATV7229A के नाम (केवल खाते में देय) भेजने का कष्ट करें, साथ ही अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखकर अवश्य भेजने की कृपा करें। आप ऑनलाइन भी धन जमा करवा सकते हैं, परन्तु ऐसा करने वाले महानुभाव अपना नाम व पता दूरभाष द्वारा तत्काल सूचित करने का कष्ट करें, जिससे समय पर रसीद भेजी जा सके, अन्यथा हमें बहुत कठिनाई होती है।

नोट- न्यास को दिया हुआ दान आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80-जी के अन्तर्गत कर मुक्त है।

* * * * *

आर्य समाज के नियम (मानवधर्म सूत्रदशक)

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

2. ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ मनुष्यों) का परम धर्म है।

4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

* * * * *

The Ved Science Publication

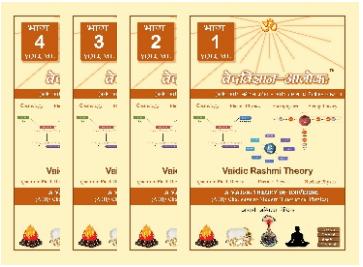

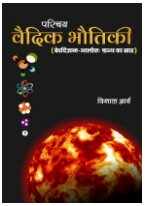

परिचय
वैदिक भौतिकी

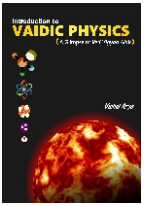

Introduction to
Vaidic Physics

बोलो! किधर जाओगे ?
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

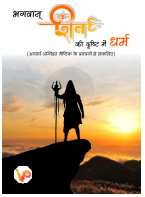

भगवान् शिव की दृष्टि में धर्म
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

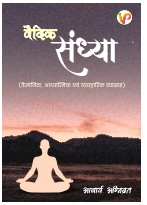

वैदिक संध्या
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

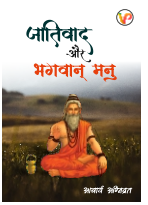

जातिवाद और भगवान् मनु
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

सत्यार्थ प्रकाश
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

मांसाहार
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

विज्ञान क्या है ?
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

What is Science?
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

We are dedicated to Publish, Promote and Sell texts that illuminate *Vaidika* science and Knowledge...

Contact us:

thevedscience.com thevedscience@gmail.com 9530363300

ईश्वर का प्रथम उपदेश यही क्यों?

सृष्टि के आदि में परमात्मा ने वेद का ज्ञान दिया होगा, जीवन चलाने के लिए सम्पूर्ण विद्याएँ दी होंगी, क्योंकि सम्पूर्ण सृष्टि परमात्मा ने बनाई। ईश्वर ने मनुष्य व अन्य प्राणियों को बनाया, तब क्या मनुष्य बनाकर के ऐसे ही छोड़ दिया होगा? उसको ज्ञान तो दिया ही होगा कि इसमें कैसे रहना है? कैसे जीना, कैसे सृष्टि को जानना, कैसे अपने शरीर को जानना, कैसे स्वयं को जानना, कैसे ईश्वर को जानना। अगर ये सब ज्ञान नहीं देना होता, तो किसी पुस्तक की आवश्यकता ही नहीं होती।

आचार्य अग्निव्रत

/vaidicphysics